# युग निर्माण योजना

अप्रैल – 2026

₹ 13 – एक प्रति । ₹ 150 – वार्षिक । वर्ष – 62 – अंक – 10



यह पत्रिका आप स्वयं पढ़ें। कम से कम दस अन्य परिचितों को पढ़ाएँ, ताकि ज्ञान का आलोक जन-जन तक पहुँच सके।

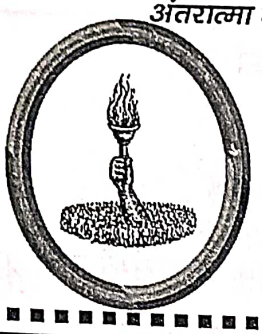
9 - उपासना और साधना
25 - वयोवृद्ध ऐसे जिएँ
13 - स्वाध्यायान्मा प्रमदः
31 - गायत्री मंत्र ही सर्वश्रेष्ठ क्यों ?

# गायत्री तपोभूमि, मथुरा



महाशिवरात्रि पर्व, रामचरित मानस अखण्ड पाठ एवं पूर्णाहुति यज्ञ

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्
उस प्राणस्वरूप, दुःखनाशक, सुखस्वरूप, श्रेष्ठ, तेजस्वी, पापनाशक, देवस्वरूप परमात्मा को हम अपनी अंतरात्मा में धारण करें । वह परमात्मा हमारी बुद्धि को सन्मार्ग में प्रेरित करे ।



# युग निर्माण योजना

नैतिक एवं सांस्कृतिक पुनरुत्थान का मासिक पत्र

संस्थापक / संरक्षक
**वेदमूर्ति तपोनिष्ठ युगद्रष्टा**
**पं० श्रीराम शर्मा आचार्य**
एवं
**माता भगवती देवी शर्मा**
संपादक
**ईश्वर शरण पाण्डेय**
सहसंपादक
**सूर्यमणि तिवारी**
**दीनदयाल अमृते**
कार्यालय
**युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट**
गायत्री तपोभूमि, मथुरा
पि० को० 281 003
**दूरभाष नंबर**
(0565) 2530115, 2530128, 2530399,
मो० 09927086287, 09927086289
व्हाट्सएप नं० : 7055514422
**( इन पर एस.एम.एस. न करें )**
**समय : प्रातः 9 से सायं 5 बजे**
***ई-मेल :***
yugnirman@yugnirmanyojna.org
website : www.yugnirmanyojna.org
**अप्रैल —2026**
प्रकाशन तिथि : 17.03.2026
**वर्ष : 62** **अंक : 10**
वार्षिक शुल्क : 150 रु०
आजीवन : 3000 रु०
(बीसवर्षीय)
वार्षिक विदेश : 2200 रु०

## तप और वैराग्य

सत्य की प्राप्ति तपस्वी ही कर सकता है। शारीरिक और मानसिक प्रलोभनों से बचने में जिस तितिक्षा और कष्ट-सहिष्णुता की, धैर्य और संयम की आवश्यकता पड़ती है, उसे जुटा लेने का नाम ही तप है। अकारण शरीर को सताने का नाम ही तप नहीं है। सताना तो किसी का भी बुरा है, फिर शरीर को व्यथित और संतप्त करने से ही क्या हितसाधन हो सकता है? सत्यमय जीवनलक्ष्य निर्धारित करने के कारण सीमित उपार्जन से निर्वाह करने की स्थिति में, गरीबी अथवा मितव्ययता अपनानी पड़ती है। इसे तपस्या कहते हैं। इसे प्रसन्नतापूर्वक स्वीकार और शिरोधार्य करने का नाम तप-साधना ही है।

सत्यरूप नारायण को प्राप्त करने का मूल्य है—वैराग्य। वैराग्य का अर्थ—घर-परिवार को छोड़ विचित्र वेश बनाना या भिक्षाटन करना नहीं है, वरन यह है कि जिस राग-द्वेष की धूप-छाँह में सारा जगत् हँसता, रोता, अशांत और उद्विग्न रहता है। उस विडंबना से बचते हुए महान लक्ष्य की ओर अनवरत गति से चलते जाना। सत्यनिष्ठ व्यक्ति इस असत्यमग्न संसार को एक विचित्र प्राणी लगता है। उसे भी अज्ञान के अंधकार में भटकती दुनिया दयनीय लगती है। दोनों का तालमेल नहीं बैठता। यह विसंगति कहीं कटुता उत्पन्न करती है, कहीं तिरस्कार उलीचती है, कहीं अवरोध उत्पन्न करती है, कहीं त्रास देती है। इसे उपेक्षापूर्वक देखना वैराग्य है और इस पर भी जो त्रास सहने पड़ें, उन्हें संतोषपूर्वक सहने का नाम तप है। ❐

# अनुक्रमणिका


- ❋ आवरण पृष्ठ—1 — 1
- ❋ आवरण पृष्ठ—2 — 2
- ❋ तप और वैराग्य — 3
- ❋ प्रेरक एवं पावन जयंतियाँ — 5
- ❋ शरीर-शोधक अनन्नास — 7
- ❋ उपासना और साधना — 9
- ❋ हम अंधकार से प्रकाश की ओर चलें — 11
- ❋ स्वाध्यायान्मा प्रमदः — 13
- ❋ पूर्ण शाकाहारी प्रकृति है, मनुष्य की — 15
- ❋ महर्षि गौतम की गायत्री-साधना — 17
- ❋ **आत्मीय अनुरोध**
  जीवन में वित्तीय अनुशासन का महत्त्व — 19
- ❋ **ज्ञातव्य** — 21
- ❋ **प्राकृतिक चिकित्सा**
  स्पाइनल बाथ — 23
- ❋ वयोवृद्ध ऐसे जिएँ — 25
- ❋ बच्चों को अभिभावक दें सुसंस्कार — 27
- ❋ **कथा-संवाद**
  योगी की संपदा है—वैराग्य — 29
- ❋ गायत्री मंत्र ही सर्वश्रेष्ठ क्यों ? — 31
- ❋ ग्रीष्मावकाश में बाल संस्कारशाला — 33
- ❋ मानवीय संस्कृति और परिवार — 35
- ❋ गायत्री तपोभूमि के बैंक खातों का विवरण — 37
- ❋ परशुराम जयंती (कविता) — 38
- ❋ आवरण पृष्ठ—3 — 39
- ❋ आवरण पृष्ठ—4 — 40


## अप्रैल-मई, 2026 के पर्व-त्योहार

| | | |
|---|---|---|
| बुधवार | 01 अप्रैल | पूर्णिमा व्रत |
| गुरुवार | 02 अप्रैल | हनुमान जयंती |
| सोमवार | 13 अप्रैल | वैशाखी/वरूथिनी एकादशी |
| मंगलवार | 14 अप्रैल | आंबेडकर जयंती |
| रविवार | 19 अप्रैल | परशुराम जयंती |
| सोमवार | 20 अप्रैल | अक्षय तृतीया |
| गुरुवार | 23 अप्रैल | गंगोत्पत्ति/चित्रगुप्त जंयती |
| शनिवार | 25 अप्रैल | जानकी नवमी |
| सोमवार | 27 अप्रैल | मोहिनी एकादशी |
| गुरुवार | 30 अप्रैल | नृसिंह जयंती |
| शुक्रवार | 01 मई | बुद्ध पूर्णिमा |
| बुधवार | 13 मई | अपरा एकादशी |
| शनिवार | 16 मई | वट सावित्री व्रत |
| बुधवार | 27 मई | कमला एकादशी 'वै.' |
| शनिवार | 30 मई | पूर्णिमा व्रत |

# प्रेरक एवं पावन जयंतियाँ

### श्री हनुमान जयंती

रामनवमी के छह दिन बाद चैत्र सुदी पूर्णिमा को हनुमान जयंती होती है। श्री हनुमान जी जहाँ श्रीराम के परमभक्त थे, वहाँ उद्योग, उत्साह, साहस के अवतार थे। रामायण के संपूर्ण प्रसंग में हनुमान जी महान योद्धा, कर्मठ, साहसी व्यक्ति के रूप में परिलक्षित होते हैं। श्रीराम का दर्शन होने के पश्चात श्री हनुमान ने राम-काज के लिए कभी भी तनिक-सा प्रमाद नहीं किया। सीता की खोज, लंका दहन, समुद्र लंघन, रावण-मेघनाद के समक्ष निर्भयता का व्यवहार, युद्ध में अपूर्व क्षमता का प्रदर्शन—ये सब श्री हनुमान के पुरुषार्थ उद्योग, शक्ति, सामर्थ्य के उदाहरण हैं। भय, आलस्य, चिंता, क्षोभ जैसी कोई भी बात श्री हनुमान जी के साहसी असमान्य घटनाओं से भरे जीवन में नहीं मिलती।

धर्म पक्ष का समर्थन करने के लिए, अन्यायी से लड़ने के लिए अपने जीवन का उत्सर्ग कर उन्होंने जनसाधारण के सामने अपना उज्ज्वल उदाहरण रखा। इसी से वे वानर होते हुए भी देवता माने गए और भारत भर में बड़ी श्रद्धा के साथ उनकी पूजा होती है।

### श्री परशुराम जयंती

वैशाख सुदी 3 अक्षय तृतीया को परशुराम जी की जन्म-जयंती मनाई जाती है। इन्हें भगवान का अवतार माना जाता है और वे अमर हैं; ऐसा कहा जाता है। कोंकण और केरल में उनकी पूजा अधिक होती है। समुद्र तट पर कितने ही उनके मंदिर बने हैं और वहाँ कितने ही मेले भी इसी पर्व पर लगते हैं।

सज्जनता और दुष्टता की अति कहीं भी नहीं होनी चाहिए। दोनों का ही समुचित प्रयोग किया जाना चाहिए। दुष्टों के साथ सज्जनता और सज्जनों के साथ दुष्टता को व्यर्थ ही नहीं अनुपयुक्त समझने की मान्यता परशुराम जी के जीवन और आदर्शों में कूट-कूटकर भरी थी। अहिंसा के इसी स्वरूप का वे प्रतिपादन करते रहे। हिंसा और अहिंसा का अद्‌भुत समन्वय करने वाले परशुराम अभी भी हमारे विचार-क्षेत्र में एक पहेली की तरह विद्यमान रहते हैं।

जन-कल्याण के लिए परशुराम जी ज्ञान और शौर्य दोनों को ही आवश्यक मानते थे। नम्रता और ज्ञान से सज्जनों को और प्रतिरोध तथा दंड से दुष्टों को जीता जा सकता है; ऐसी उनकी निश्चित मान्यता थी। इसलिए वे उभयपक्षीय संतुलित नीति लेकर चलने से ही धर्मरक्षा की संभावना स्वीकार करते थे। उनकी मान्यता थी।

**अग्रतश्चतुरो वेदाः पृष्ठतः सशरं धनुः।**
**इदं ब्रह्ममिदं क्षात्रं शास्त्रादपि शरादपि॥**

"मुख से चारों वेदों का प्रवचन करके और पीठ पर धनुष-बाण लेकर चला जाए। ब्रह्मशक्ति और शास्त्रशक्ति दोनों ही आवश्यक हैं। शास्त्र से भी और शस्त्र से भी धर्म का प्रयोजन सिद्ध करना चाहिए।"

## श्री शंकराचार्य जयंती

आदि शंकरा चार्य की जयंती वैशाख शुक्ल पक्ष पंचमी को मनाई जाती है। संन्यास लेने के पश्चात एक दिन वे प्रात:काल नदी में स्नान कर लौट रहे थे कि सहसा एक चांडाल से छू गए, स्पर्श होते ही शंकराचार्य कुपित हो उठे और चांडाल को अपवित्र कर देने का दोष लगाकर भला-बुरा कहने लगे। चांडाल उनका रोष देखकर हँसा और बोला—''महाराज! संन्यास लेकर संत तो बन गए और वेद-शास्त्र पढ़कर पंडित भी, किंतु आपका तुच्छ देहाभिमान अब भी न गया। इस प्रकार की भेदबुद्धि रहते हुए आप अपने को पूर्ण संत मान रहे हैं। यह तो उचित नहीं दीखता। सबके शरीरों में एक आत्मा का निवास है; इस सत्य को प्रतीत किए बिना आपका संन्यास अपूर्ण है, आडंबर है।''

चांडाल की बातों ने शंकराचार्य की आँखें खोल दीं। उन्होंने अपनी अपूर्णता समझी और उसे पूरा करने के लिए पुन: घोर साधना में लग गए तथा अबकी बार जब अध्यात्म के सत्यस्वरूप को हृदयंगम कर सके तो तुरंत ही अपने कर्त्तव्य-पथ पर चल पड़े।

उन्होंने अटक से कटक और कन्याकुमारी से कश्मीर तक की पैदल यात्रा की। इस यात्रा में उन्होंने हजारों व्याख्यान दिए। बड़े-बड़े उद्भट विद्वानों से शास्त्रार्थ किया और धर्म के सच्चे स्वरूप को समझने-समझाने के लिए सभाएँ आयोजित कीं। उन्होंने धर्म का प्रचार करने के लिए चिद्विलास, विष्णुगुप्त, हस्तामलक, समित् पाणि, ज्ञानवृंद, भानुगर्भिक, बुद्धि विरंचि त्रोटकाचार्य, पद्मनाभ, शुद्धकीर्ति, मंडन मिश्र, कृष्ण दर्शन आदि देश के उद्भट विद्वानों को संगठित किया। वेद-धर्मानुयायियों की एक विशाल धर्मसेना बनाई गई और संपूर्ण भारत में धर्म-सुधार की हलचल मचा दी। उनके इस अखंड प्रयत्न का फल यह हुआ कि जनता के मानस में धर्म संबंधी जो भी भ्रांतियाँ घर कर रही थीं, वे सब दूर होने लगीं और सारे देश में वैदिक धर्म का शंखनाद गूँजने लगा। ❐

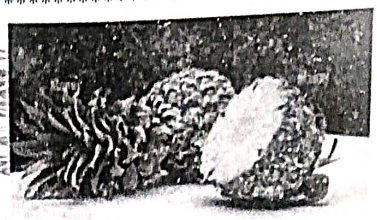
---

**हवा जोर से चलने लगी। धरती की धूल उड़-उड़कर आसमान पर छा गई। धरती से उठकर आकाश पर पहुँच जाने पर, धूल को बड़ा गर्व हो गया। वह सहसा कह उठी—''आज मेरे समान कोई भी ऊँचा नहीं। जल, थल, नभ के साथ दशों-दिशाओं में मैं ही मैं व्याप्त हूँ।''**

**बादल ने धूल की घमंड से भरी बातें सुनी। उसने धूल की भूल पर थोड़ा अट्टहास किया और अपनी पानी की धाराएँ खोल दीं। देखते-ही-देखते धूल आसमान से उतरकर जमीन पर पानी के साथ बहती दिखलाई देने लगी, दिशाएँ साफ हो गईं। कहीं भी धूल का नाम तक न रहा।**

**पानी के साथ बहती हुई धूल से धरती ने पूछा—''रेणुके! तुमने अपने उत्थान-पतन से क्या सीखा?'' धूल ने कहा—''धरती माता! मैंने सीखा कि उन्नति पाकर किसी को गर्व नहीं करना चाहिए। गर्व करने वाले मनुष्य का पतन अवश्य होता है। अहंकार का मद अधिक देर नहीं टिकता। बहुत शीघ्र ही उसके कुपरिणाम सामने आ जाते हैं।''**

# शरीर-शोधक अनन्नास



अनन्नास मूलतः ब्राजील का फल है, जिसे कोलंबस यूरोप लाया था। भारतवर्ष में इसे पुर्तगाली लेकर आए थे। आयुर्वेदिक मतानुसार इसका कच्चा फल रुचिकारक, हृदय के लिए लाभप्रद, पित्त एवं कफ बढ़ाने वाला होता है।

पका हुआ फल गरमी दूर करता है। लू से बचाव करता है। तृप्तिकारक होता है। पित्तनाशक, शीतल, मधुर, स्वादिष्ट तथा हृदय के लिए बलशाली होता है। अनन्नास मोटापा को घटाता है। अनन्नास शरीर के विषैले तत्त्वों (टॉक्सिंस) को बाहर निकालता है। यह अनेक रोगों से बचाता है। जीवनीशक्ति बढ़ाता है। अनन्नास खाली पेट सेवन न करें तथा गर्भवती को अनन्नास का सेवन न कराएँ।

### घरेलू उपयोग

● **एसिडिटी में**—स्वादानुसार देशी खाँड़ तथा 1-2 काली मिर्च पीसकर 2 कप पके फल के रस के साथ सेवन कराना चाहिए।

● **जलोदर में**—अनन्नास के पत्तों का काढ़ा एक कप बनाकर छोटी हरड़ का चूर्ण 3 ग्राम मिलाकर सेवन कराना चाहिए। सुबह-शाम नित्य सेवन से लाभ होता है।

● **शरीर में सूजन होने पर**—यकृत-वृद्धि से हृदय की सूजन या शरीर में कहीं भी सूजन हो, नित्यप्रति सुबह-शाम अनन्नास का रस एक-एक गिलास पीने से लाभ होता है। अच्छा हो इन दिनों 15-20 दिन के लिए भोजन की जगह केवल दुग्धाहार ही लें।

● **पीलिया में**—अनन्नास का रस एक कप लेकर 2 ग्राम हलदी तथा देशी मिसरी 10 ग्राम मिलाकर दिन में दो बार नित्य पिलाने से लाभ होता है। दही में मिसरी मिलाकर सेवन करना, ताजा गन्ना चूसना, नीबू का पानी पीना, छेना के साथ मिसरी का सेवन करना तथा मौसमी, संतरा, पपीता, सेव, चीकू इत्यादि फलों का सेवन करना चाहिए। मिर्च, नमक, तेल, घी तथा गरिष्ठ भोजन का छह माह तक परहेज रखना अति उत्तम उपाय है।

● **मासिक धर्म की रुकावट में**—मासिक स्राव समय पर न हो रहा हो तो अनन्नास का रस 1 कप लेकर पीपल की छाल का चूर्ण 3 ग्राम तथा गुड़ 3 ग्राम मिलाकर पीने से लाभ होता है।

● **मधुमेह में**—100 ग्राम अनन्नास का रस लेकर गोक्षरू, आँवला, जामुन, हरड़ का चूर्ण 5 ग्राम मिलाकर पीना चाहिए। अनन्नास को शुष्क कर पाउडर बनाकर रखना चाहिए। इसे 4-4 ग्राम नित्य सुबह-शाम सेवन करने से मधुमेह तथा बहुमूत्र रोग में लाभ होता है।

● **गले के रोगों में**—गले में खराश तथा तालू-मूल में सूजन-जलन हो तो अनन्नास का रस सेवन कराने से लाभ होता है।

● **टांसिलाइटिस में**—टांसिल की सूजन में अनन्नास का रस गरम करके पीना लाभप्रद होता है।

● **पेशाब की जलन में**—अनन्नास का शरबत पिलाने से पेशाब का संक्रमण, जलन इत्यादि विकृतियों का शमन होता है।

● **घमोरियों में**—घमोरियाँ होने पर अनन्नास का गूदा लगाने से घमोरियाँ ठीक हो जाती हैं।

● **हृदय संबंधी रोगों में**—अनन्नास का सेवन करना हृदय के लिए हितकारी होता है। क्षारीय होने से रक्त की अम्लीयता को कम करता है। हानिकारक पदार्थों को बाहर निकालकर शारीरिक बल तथा हृदय को ताकत देता है।

● **बहुमूत्र में**—अनन्नास के फल के रस के साथ पीपली चूर्ण 2 ग्राम डालकर पीने से लाभ होता है।

● **अपच में**—अनन्नास में पाचक एंजाइम होने से यह अपच में बड़ा लाभ करता है। सेंधा नमक और काली मिर्च स्वादानुसार मिलाकर फल के साथ खाने से लाभ होता है। अनन्नास का एक कप रस पीने से पेट फूलना, अजीर्ण, अपच दूर होता है।

● **मोटापा में**—अनन्नास में ब्रोमेलिन नामक एंजाइम होता है, जो शरीर में जमा हुई अनावश्यक चरबी को नष्ट कर देता है, जिससे मोटापा दूर होता है। इसका नियमित सेवन करने से पूर्ण लाभ होता है।

● **एनीमिया में**—हीमोग्लोबिन घटने पर अनन्नास का रस सेवन कराने से रक्त बढ़ने लगता है, जिससे रक्ताल्पता रोग दूर होता है।

● **भूख की कमी में**—जठराग्नि मंद होने पर अनन्नास का सेवन कराने से भूख बढ़ती है, जठराग्नि तेज होती है।

● **आंत्रकृमि होने पर**—(1) कुछ दिनों तक नित्यप्रति सुबह-शाम एक-एक कप अनन्नास का रस सेवन कराना चाहिए। इससे आंत्रकृमि नष्ट हो जाते हैं। (2) बायबिडंग तथा अजवायन 2-2 ग्राम चूर्ण अनन्नास के रस तथा शहद के साथ चटाने से लाभ होता है।

● **मेधा शक्ति में**—अनन्नास का प्रतिदिन एक कप रस का सेवन करने से मस्तिष्क की क्षमता में विकास होता है। स्मरणशक्ति बढ़ती है।

● **किडनी की पथरी में**—पथरी का आकार छोटा हो तो वह खान-पान के बदलाव से नष्ट हो जाती है। अनन्नास का रस नित्य दो बार पीने से 2-3 माह में लाभ होता है। गन्ने का रस, नीबू का रस मिलाकर पीने से तथा खीरे का रस, नीबू का रस मिलाकर पीने से भी लाभ होता है।

● **पेट की अम्लता में**—अनन्नास के रस में अदरक का रस स्वाद के अनुसार मिलाकर थोड़ा-सा शहद भी मिला दें तथा इसका सेवन करें। इससे अम्लता दूर होती है।

● **बड़ी आँत के विकार में**—अनन्नास के रस में गुड़ मिलाकर पीने से बड़ी आँत का वात विकार दूर होता है। वायु विकृति नष्ट होने से लाभ होता है।

● **उदरशूल में**—आधा कप अनन्नास के रस में आधा ग्राम हींग, सेंधा नमक 2 ग्राम तथा आधा ग्राम अदरक का रस मिलाकर सुबह-शाम सेवन करने से वायु के दरद में लाभ होता है।

● **बाल पेट में जाने पर**—अनन्नास खाने से पेट में यदि बाल चला गया हो तो उसे अनन्नास गला देता है।

● **कब्ज में**—एक-एक कप अनन्नास का रस दिन में दो बार पीने से कब्ज मिटता है। ❑

# उपासना और साधना



कोई भी किसान खेत में बीज डालने से पूर्व उसे पानी से भरकर उसकी अच्छी तरह जुताई करता है। कूड़ा-कचरा निकालता है, खाद डालता है, तब भूमि इस योग्य हो पाती है कि उसमें बीज डालने और उसके उगने की संभावनाएँ सुनिश्चित हो सकें। उपासना मनोभूमि में उगने वाला बीज है, उसके फलने-फूलने की आशा तभी की जा सकती है, जब मनोभूमि का उसी प्रकार परिष्कार किया जाए, जिस प्रकार कृषक अपने खेतों का करता है। मनोभूमि को शुद्ध किए बिना डाला गया उपासना का बीज झाड़-झंखाड़ में पड़े बीज की तरह होगा, जो या तो स्वयं सड़-गलकर नष्ट हो जाता है या जिसे चिड़िया, चूहा और जंगली जीव चुन ले जाते हैं।

जितना महत्त्व उपासना का है, उतना ही साधना का भी है। हमें उपासना पर ही नहीं, साधना पर भी ध्यान और जोर देना चाहिए। जीवन को पवित्र और परिष्कृत, संयत और सुसंतुलित, उत्कृष्ट और आदर्श बनाने के लिए अपने गुण, कर्म, स्वभाव को उच्चस्तरीय बनाने के लिए निरंतर प्रयत्न करना चाहिए। इस प्रयत्न का नाम ही जीवन-साधना अथवा साधना है। उपासना-पूजा तो निर्धारित समय का क्रियाकलाप पूरा कर लेने पर समाप्त हो जाती है, पर साधना चौबीस घंटे चलानी पड़ती है। अपने हर विचार और हर कार्य पर एक चौकीदार की तरह कड़ी नजर रखनी पड़ती है कि कहीं कुछ अनुचित, अनुपयुक्त तो नहीं हो रहा है। जहाँ भूल दिखाई दी कि उसे तुरंत सुधारा, जहाँ विकार पाया कि तुरंत उसकी चिकित्सा की, जहाँ पाप देखा कि तुरंत उससे लड़ पड़ें। यही साधना है। जिस प्रकार सीमारक्षक प्रहरियों को हर घड़ी शत्रु की चालों एवं बातों का पता लगाने और जूझने के लिए तैयार रहना पड़ता है, वैसे ही जीवन-संग्राम के हर मोर्चे पर हमें सतर्क और तत्पर रहने की आवश्यकता पड़ती है। यही तत्परता साधना है।

उपासना और साधना के समन्वित उपक्रम को योग भी कहा जा सकता है। योग का सामान्य अर्थ होता है—जोड़ना। आत्मा को परमात्मा के साथ जोड़ देने की प्रक्रिया योग कहलाती है। इसमें उपासना और साधना दोनों का समान महत्त्व है। योग-साधना में कई प्रकार के उपासनात्मक क्रियाकृत्य अपनाने पड़ते हैं। इनका उद्देश्य आत्मचेतना को परमात्मचेतना से जोड़ने वाली मनःस्थिति उत्पन्न करना है। इस तथ्य को ध्यान में रखकर चला जाए, तभी लक्ष्य की पूर्ति होनी संभव है। यदि चेतना के परिष्कार का प्रयत्न न किया जाए और मात्र उन क्रियाकृत्यों को ही योगाभ्यास मान लिया जाए तो उस भ्रांति के कारण घोर परिश्रम करते रहने पर भी कोल्हू के बैल की तरह जहाँ-के-तहाँ बने रहना पड़ेगा। उपासनात्मक क्रियाकृत्यों में जप, ध्यान, नाद, एकाग्रता, तन्मयता, स्वाध्याय, सत्संग आदि साधनों का आश्रय लिया जाता है, ताकि चेतना

को दिशा एवं प्रेरणा दी जा सके और उसे अपनी जीव ससीमता को ब्रह्म असीमता में घुला देने के लिए आवश्यक प्रकाश एवं प्रशिक्षण मिल सके।

यह मानकर चलना भी गलत है कि भजन करने मात्र से पाप कट जाएँगे और ईश्वर प्रसन्न हो जाएगा। अतएव जीवन को शुद्ध बनाने अथवा कुमार्गगामिता से बचाने की आवश्यकता नहीं है। इसी भ्रमपूर्ण मान्यता के कारण लोग अध्यात्म के लाभों से वंचित रहते हैं। यह भ्रम दूर हटना चाहिए और भारतीय अध्यात्म का तत्त्वज्ञान एवं ऋषि-अनुभवों का यही निष्कर्ष अपनाना चाहिए कि उपासना और साधना आध्यात्मिक प्रगति के दो अविच्छिन्न पहलू हैं, एकदूसरे के पूरक हैं तथा एक के बिना दूसरा अपूर्ण है। जिस प्रकार अन्न और जल, रात और दिन, शीत और ग्रीष्म, स्त्री और पुरुष का जोड़ा है; उसी प्रकार उपासना और साधना भी अन्योन्याश्रित हैं। एक के बिना दूसरा अकेला, असहाय एवं अपूर्ण ही बना रहेगा, इसलिए दोनों को साथ लेकर अध्यात्म मार्ग पर आरूढ़ होना ही उचित है।

गायत्री-उपासक का जीवनक्रम उत्कृष्ट, आदर्शवादी एवं परिष्कृत होना ही चाहिए। नशा पीने पर मस्ती आनी ही चाहिए। भक्ति का प्रभाव सज्जनता और प्रगतिशीलता के रूप में दीखना ही चाहिए। इसलिए गायत्री का वरदान प्राप्त करने की पात्रता उत्पन्न करने के लिए उपासना के साथ साधना का उपक्रम भी अनिवार्य रूप से जोड़े रखना चाहिए अर्थात उसमें आत्मनिरीक्षण, आत्मसुधार, आत्मनिर्माण एवं आत्मविकास की परिपूर्ण प्रक्रिया जुड़ी ही रहनी चाहिए। उपासना और साधना का अलग अस्तित्व है—यह सोचना गलत है। एक को कर लेने से दूसरे की पूर्ति हो जाएगी, यह सोचना भी अनुचित है। अस्तु, गायत्री की भावनात्मक, क्रियाकांडपरक पूजा के साथ चरित्र और आचरण द्वारा भी उसकी पूजा की जानी चाहिए।

हम निष्पाप बनें, इतना ही पर्याप्त नहीं है, वरन यह भी आवश्यक है कि अपने कर्म एवं स्वभाव में सद्गुणों का समुचित समावेश करके दिव्य जीवन बनाएँ तथा उसके द्वारा अपना और समस्त समाज का कल्याण करें। व्यक्तित्व को परिष्कृत और विकसित रखते हुए ही हम आत्मिक प्रगति के मार्ग पर बढ़ सकते हैं तथा उसमें पूर्णता प्राप्त करने में सफल हो सकते हैं। ❐

**संत जॉन को जब अवकाश मिलता, तभी एकांत कमरे में बैठकर ईश्वरभक्ति और आत्मप्रेरणा वाले गीत गाने बैठ जाते और उनमें इतने तल्लीन हो जाते कि उन्हें सुध-बुध न रहती।**

**एक मित्र ने पूछा—"आप किसी और से संगीत सुन सकते हैं, रेडियो बजा सकते हैं। आपको गाना नहीं आता तो खुद क्यों गाते हैं?" इस पर उन्होंने उत्तर दिया—"स्वर नहीं तो क्या हुआ, जो आत्मा को प्रकाशित करता है, उस संगीत से जैसा आनंद मिलता है, वैसा भला दूसरा कौन देगा?"**

# हम अंधकार से प्रकाश की ओर चलें

अज्ञान एक प्रकार का अंधकार है। अंधकार में पास रखी हुई वस्तु का स्वरूप भी ठीक से दिखाई नहीं पड़ता; कुछ-का-कुछ प्रतीत होता है। कई बार तो जो चीज सामने रखी है, वह भी ढूँढ़नी पड़ती है, फिर भी मिलती नहीं। अंधकार ऐसा ही दोषपूर्ण है। इसी से उसकी निंदा की जाती है। अँधेरा भय का कारण भी है। रात को सूने घर में डर लगता है। अकेले कहीं जंगल में सुनसान में जाना पड़े, तो भी भय प्रतीत होता है; यद्यपि डर का कोई कारण नहीं होता। दिन में वहाँ रहें या गुजरें तो कुछ भी भय प्रतीत नहीं होता, पर रात डरावनी मालूम पड़ती है। मन में हर क्षण ऐसी आशंकाएँ उठती रहती हैं कि कहीं-कोई खतरा न हो। चोर का, साँप का, भूत का और न जाने किस-किस का डर मन में उठता है और कहीं-कोई पत्ता खड़के, चूहा कूदे तो बिलकुल यही लगता है कि कोई भूत उछला। कभी-कभी छोटे-छोटे निर्दोष पेड़-पौधे, रीछ-व्याघ्र, चोर, भूत-पलीत जैसे लगते हैं और कई बार तो उनमें आँख, दाँत, हाथ बढ़ते हुए तथा हरकत करते हुए दिखाई देते हैं। कहते हैं कि शंका डाइन, मनसा भूत—आशंका डाइन के बराबर भयानक रूप धारण करती है और मन में उत्पन्न हुई आशंका भूत का डरावना रूप बनाकर खाने-पकड़ने को दौड़ती है।

**अंधकार और भय का जोड़ा**

अंधकार अपने आप में एक प्रकार का भय भरे बैठा रहता है। अँधेरा वस्तुस्थिति का वास्तविक ज्ञान नहीं होने देता; फलस्वरूप डरावनी परिस्थितियाँ अनायास ही चारों ओर बन जाती हैं। इस विषम स्थिति से बचने के लिए रात को भी कृत्रिम प्रकाश उत्पन्न करना पड़ता है। दिन के प्रकाश में 90 प्रतिशत डर समाप्त हो जाता है और रात में अकारण ही डरावनी परिस्थितियों की घटा घिर आती है। प्रकाश की इसीलिए प्रशंसा और अँधेरे की इसीलिए निंदा की जाती है। एक जहाँ हमें दूरदृष्टि एवं वस्तुस्थिति का वास्तविक ज्ञान कराता है; वहीं दूसरा हमारी ज्ञान-परिधि को कुंठित कर देता है, हमें अनजान बना देता है। अनजान स्थिति में सर्वत्र भय-ही-भय है। भय में हर दृष्टि से हानि-ही-हानि है। इसलिए उपनिषद्कार ने **तमसो मा ज्योतिर्गमय** का उद्घोष करते हुए अंधकार से विरत होकर प्रकाश की ओर चलने का निर्देश किया है।

अज्ञान की तुलना अंधकार से की जाती है। जो दोष अंधकार में हैं; वे सभी अज्ञान में मौजूद हैं। अज्ञान तो उसी तरह डराता है, जिस तरह अँधेरा। वस्तुस्थिति की जानकारी के अभाव में हम कुछ-का-कुछ सोचते और कुछ-का-कुछ करते हैं। विचारणा और कार्यपद्धति गलत हो जाने का परिणाम त्रासदायक अनर्थ के रूप में ही सामने आता है। जिसमें ज्ञान का जितना अभाव है, वह उतना ही उद्विग्न और भ्रमित रहता है। मृगतृष्णा वाली बात विख्यात है। कहते हैं कि प्यासा हिरन रात की चाँदनी में जमीन पर

फैले हुए सफेद नमक—रेह को दूर से पानी समझता है और दौड़कर वहाँ पहुँचता है, पर वहाँ अभीष्ट वस्तु नहीं मिलती। पानी की कल्पना मिथ्या सिद्ध होती है और सफेद नमक जमीन पर बिखरा हुआ मिलता है। अँधेरे में पड़ी हुई रस्सी साँप प्रतीत होती है। भ्रम-जंजाल में पड़ा हुआ मनुष्य वास्तविकता की जानकारी न होने के कारण अगणित कष्ट सहता और अपने श्रम व समय को बरबाद करता रहता है। अंत में जब उसे अपनी भूल मालूम पड़ती है, तब आत्मग्लानि और पश्चात्ताप का नया दुःख सामने आ खड़ा होता है।

**ज्ञानप्राप्ति का पुरुषार्थ**

ऋषियों ने अज्ञान से उबरने और ज्ञान को प्राप्त करने में मनुष्य का सर्वोपरि पुरुषार्थ माना है। अध्यात्म तत्त्वज्ञान का सारा ढाँचा ही 'ज्ञान नेत्रोन्मीलन के उद्देश्य' से खड़ा किया गया है। शास्त्र मानता है कि अज्ञानी मनुष्य एक प्रकार से अंधा है। सूरज के न रहने पर रात्रि का अँधेरा फैलता है। उससे भौतिक जगत् में बिखरी हुई वस्तुओं के बारे में जानकारी से वंचित एवं पदार्थों की वस्तुस्थिति के संबंध में भ्रमित होना पड़ता है, पर बौद्धिक अंधकार से अज्ञान उत्पन्न होता है; उससे विचार-जगत् में भारी भ्रम उत्पन्न हो जाता है; कुछ-का-कुछ प्रतीत होने लगता है और मृगतृष्णा में भटकने वाले हिरन की अपेक्षा भी मनुष्य अनेक गुना भ्रमित होकर दुःख पाता, हानि उठाता एवं न करने लायक निंदनीय कार्य, न सोचने लायक उपहास्यास्पद विचार करता देखा जाता है।

मानव जीवन का गौरव इस बात में है कि वह अंधकार को परास्त कर प्रकाश की परिस्थितियाँ प्राप्त करे। जिसे अँधेरी रात में दीपक जलाने का भी शऊर न हो, घनघोर अँधेरे में ऐसे ही डरता-मरता पड़ा रहे; उसे गया-गुजरा ही माना जाएगा। इसी प्रकार जो विचार-क्षेत्र में फैले हुए अज्ञानांधकार की निविड़ परिस्थितियों में पड़ा रहे; उससे छुटकारा पाने का प्रयत्न न करे, उसे निम्नस्तर का ही समझा जाएगा। अध्यात्मवाद का उद्देश्य और आदर्श यह है कि मनुष्य विवेकशील बने। हर बात और हर परिस्थिति की गहराई में घुसे और वास्तविकता तलाश करने का प्रयत्न करे। इस संसार में भला-बुरा सब कुछ है। बुरे-से-बुरे और अच्छे-से-अच्छे आदर्श उदाहरण, विश्वास, व्यक्ति एवं प्रचलन यहाँ विद्यमान हैं। प्रकाशवान का उदाहरण ढूँढ़ना चाहें तो निकट या दूर उनका भी बाहुल्य मिल जाएगा और यदि अंधकारपूर्ण व्यक्तित्व एवं विश्वासों की खोज की जाए तो वे और भी अधिक मात्रा में उपलब्ध हो सकेंगे।

ऐसी दशा में यह मानकर चलना कि जैसा सब कर रहे हैं; वैसा हम भी करेंगे; एक प्रकार से असंभव एवं उपहास्यास्पद है। अपने आस-पास ही हमें परस्पर घोर विरोधी आदर्श एवं उदाहरण दृष्टिगोचर हो सकते हैं। उनमें से हमें जो रुचते हैं; जिनके प्रति आकर्षण, झुकाव या पक्षपात होता है; उन्हें ही स्वीकार करते हैं और उसी रास्ते पर चलते हैं। 'जो सब करते हैं; वह हम भी करेंगे'—यह उक्ति सर्वथा असत्य है। अपनी रुचि एवं रुझान तथा विवेक के अनुकूल ही अनेक प्रकार के प्रचलनों में से कोई उचित प्रचलन चुना एवं अपनाया जाना चाहिए। ❑

# स्वाध्यात्मा प्रमदः



बहुत बार हमसे अनेक लोग किसी को धारा-प्रवाह बोलते एवं भाषण देते देखकर मंत्र-कीलित जैसे हो जाते हैं और वक्ता के ज्ञान एवं उसकी प्रतिभा की भूरि-भूरि प्रशंसा करने लगते हैं और कभी-कभी यह भी मान लेते हैं कि इस व्यक्ति पर माता सरस्वती की प्रत्यक्ष कृपा है। इसके अंतर्पट खुल गए हैं, तभी तो ज्ञान का अविरल स्रोत इसके शब्दों में मुख के द्वारा बाहर बहता चला आ रहा है।

बात भी सही है, श्रोताओं का इस प्रकार आश्चर्य विभोर हो जाना अस्वाभाविक भी नहीं है। सफल वक्ता अथवा समर्थ प्राध्यापक जिस विषय को ले लेते हैं, उस पर घंटों बोलते चले जाते हैं और यह प्रमाणित कर देते हैं कि उनको उस विषय का सांगोपांग ज्ञान है तथा उनकी सारी विद्या जिह्वा के अग्रभाग पर रखी हुई है। यह बात लगती तो वास्तव में एक चमत्कार है, एक सिद्धि जैसी। जबकि वह कोई मांत्रिक सिद्धि नहीं होती है। वह सारा चमत्कार उनके उस स्वाध्याय का फल होता है; जिसे वे किसी दिन भी, किसी अवस्था में नहीं छोड़ते। उनके जीवन का कदाचित ही कोई दिन जाता हो, जिसमें वे मनोयोगपूर्वक घंटे-दो घंटे स्वाध्याय न करते हों। स्वाध्याय उनके जीवन का एक अंग और प्रतिदिन की अनिवार्य आवश्यकता बन जाता है।

यही तो वह अबाध तप है, जिसका फल ज्ञान एवं मुखरता के रूप में वक्ताओं एवं विद्वानों की जिह्वा पर सरस्वती के वास का विश्वास उत्पन्न करा देता है। चौबीसों घंटों सरस्वती की उपासना में लगे रहिए, जीवनभर ब्राह्मी मंत्र एवं ब्राह्मी बूटी का सेवन करते रहिए, किंतु स्वाध्याय किसी दिन भी न करिए और देखिए कि सरस्वती की सिद्धि तो दूर—पास की पढ़ी हुई विद्या भी विलुप्त हो जाएगी। सरस्वती स्वाध्याय का अनुगमन करती हैं; इस सत्य का सम्मान करता हुआ जो साधक उनकी उपासना किया करता है, वह अवश्य उनकी कृपा का भागी बन जाता है।

वकील हो या उपदेशक, विद्यार्थी हो या शिक्षक बिना स्वाध्याय के अपने-अपने क्षेत्र में सफलता प्राप्त नहीं कर सकते। न उनको ज्ञान प्राप्त होता है और न ही धारा-प्रवाह बोलने की कला आती है। अंततः वे प्रगति की दौड़ में पीछे रह जाते हैं।

धार्मिक अथवा आध्यात्मिक क्षेत्र में भी देखें कि कोई अमुक नित्य चार-चार बार पूजा करता, तीन-तीन घंटे आसन लगाता, जप-कीर्तन, व्रत-उपवास करता तथा दान-दक्षिणा देता है, किंतु शास्त्रों अथवा सद्ग्रंथों का स्वाध्याय,उनके विचारों का चिंतन-मनन नहीं करता। सोच लेता है कि आत्मज्ञान अथवा परमात्म-अनुभूति करा देने के लिए इतना ही पर्याप्त है तो निश्चय ही वह भ्रम में है। आत्मा का क्षेत्र वैचारिक क्षेत्र है, सूक्ष्म भावनाओं एवं मनन-चिंतन का क्षेत्र है।

अध्ययन के अभाव में इस आत्मजगत् में गति कठिन है। आत्मा के स्वरूप का ज्ञान अथवा परमात्मा के अस्तित्व का परिचय प्राप्त हुए बिना उनसे संपर्क किस प्रकार स्थापित किया जा सकता है? इस अविगत का ज्ञान तो उन महान मनीषियों का अनुभव; अध्ययन करने से ही प्राप्त हो सकना संभव है, जो अवतार रूप में संसार को वेदों का ज्ञान देने के लिए परमात्मा का प्रतिनिधित्व करते रहते हैं। आसन, ध्यान, पूजा-पाठ तो प्रधान रूप से बुद्धि को परिष्कृत और आचरण को उज्ज्वल बनाने के लिए आवश्यक है, ताकि अध्यात्म के वैदिक तत्त्व को समझने और ग्रहण करने की क्षमता प्राप्त हो सके। यदि एक बार पूजा-पाठ को स्थगित भी रखा जाए और एकाग्रता एवं आस्थापूर्वक स्वाध्याय तथा उसका चिंतन-मनन किया जाए तो बहुत कुछ उस दिशा में बढ़ा जा सकता है। स्वाध्याय स्वयं ही एक तप, आसन और निदिध्यासन के समान है। इसका नियम-निर्वाह करने से आप-ही-आप अनेक नियम-संयमों का अभ्यास हो जाता है।

स्वाध्याय में मनुष्य का अंत:करण निर्मल कर देने और उसके अंतर्पट खोलने की सहज क्षमता विद्यमान है। आंतरिक उद्घाटन हो जाने से मनुष्य स्वयं ही आत्मा अथवा परमात्मा के प्रति जिज्ञासु हो उठता है। उच्च आध्यात्मिक अनुभूतियों का प्रस्फुटन स्वाध्याय के द्वारा ही हुआ करता है। स्वाध्याय निस्संदेह एक ऐसा अमृत है, जो मानस में प्रवेश कर मनुष्य की पाशविक प्रवृत्तियों को नष्ट कर देता है।

चारित्रिक उज्ज्वलता स्वाध्याय का एक साधारण और मनोवैज्ञानिक फल है। सद्ग्रंथों में सन्निहित साधु-वाणियों का निरंतर अध्ययन एवं मनन करते रहने से मन पर शिव-संस्कारों की स्थापना होती है, जिससे चित्त आप-से-आप दुष्कृत्यों की ओर से फिर जाता है। स्वाध्यायी व्यक्ति पर कुसंग का भी प्रभाव नहीं पड़ने पाता, इसका भी एक वैज्ञानिक कारण है। जिसकी स्वाध्याय में रुचि है और जो उसको जीवन का एक ध्येय मानता है, वह आवश्यकताओं से निवृत होकर अपना सारा समय स्वाध्याय में ही तो लगाता है।

आत्मोन्नति के संबंध में विपरीत वृत्तियाँ आलस्य, प्रमाद अथवा असंयम आदि स्वाध्यायशील व्यक्ति के निकट नहीं जाने पातीं। जिसे पढ़ना है और नित्य-नियम से जीवन का ध्येय समझकर पढ़ना है, वह जीवन की एक सुनिश्चित दिनचर्या बनाकर चलता है। उसका सोना-जागना, खाना-पीना, टहलना-घूमना और कारोबार करने के साथ-साथ पढ़ने-लिखने का कार्यक्रम एक व्यवस्थित रूप में बड़े अच्छे ढंग से चला करता है। जिसने जीवन के क्षणों को इस प्रकार उपयोगितापूर्वक नियमबद्ध कर दिया है, उसका तो एक-एक क्षण तपस्या का ही समय माना जाएगा। जिसने जीवन में व्यवस्था एवं नियमबद्धता का अभ्यास कर लिया, उसने मानो अपने आत्मलक्ष्य के लिए एक सुंदर नसेनी तैयार कर ली है, जिसके द्वारा वह सहज ही में ध्येय तक जा पहुँचेगा।

स्वाध्याय से जहाँ संचित ज्ञान सुरक्षित रहता है, वहीं ज्ञानकोश में नवीनता और वृद्धि भी होती रहती है। स्वाध्याय से विरत हो जाने वाला नई पूँजी पाना तो क्या गाँठ की विद्या भी खो देता है।

स्वाध्याय जीवन विकास के लिए एक अनिवार्य आवश्यकता है, जिसे हर व्यक्ति को पूरी करना चाहिए। इसीलिए कहा गया है "स्वाध्याय में प्रमाद न करें।" ❑

# पूर्ण शाकाहारी प्रकृति है, मनुष्य की



प्रकृति की संरचना में विविध प्राणियों में विभिन्नता दीखती है। ईश्वर या प्रकृति ने मनुष्य को शाकाहारी ही बनाया है। मनुष्य की प्राकृतिक संरचना यह सिद्ध करती है कि मनुष्य शाकाहारी के समस्त गुण-धर्म से भरा-पूरा है। मांसाहारी होने के लक्षण नहीं हैं। भारतीय संस्कृति में शाकाहार को आध्यात्मिक, धार्मिक तथा मानवीय आधार पर सर्वश्रेष्ठ आहार माना गया है। परमपूज्य गुरुदेव ने कहा है कि ''मांसाहार मनुष्यता त्यागकर ही अपनाया जा सकता है।'' पौराणिक मत के अनुसार मांसाहार और मदिरापान असुरों का प्रमुख आहार रहा है तथा घोर तामसिक आहार मांसाहार है। भारतीय संस्कृति सर्वोच्च संस्कृति रही है। यहाँ की दिनचर्या, रहन-सहन, विचार-व्यवहार सब ऋषिप्रणीत है।

आज विज्ञान के आधार पर हम हर तथ्य को कसौटी पर कसते हैं, इसी कारण शाकाहार को अब पश्चिमी देश भी तेजी से अपना रहे हैं। अब विज्ञान का आधार सबको मानना ही पड़ेगा। प्रस्तुत लेख के माध्यम से मनुष्य के शाकाहारी होने के सशक्त, अकाट्य तथ्य जन-जन के लिए लिखे गए हैं, निर्णय आप स्वयं कर सकते हैं कि मनुष्य वास्तव में शाकाहारी है या, नहीं।

**मनुष्य के शाकाहारी होने के प्रमाण—**

**( 1 ) मनुष्य की लार**—मुख में स्थित पाचक रस (सलाइवा) जिसे टायलिन एंजाइम कहते हैं, वह सभी शाकाहारी प्राणियों में होता है, जो कार्बोहाइड्रेट को पचाने के लिए है। यह क्षारीय पाचक रस है, परंतु मांसाहारी प्राणियों की लार अम्लीय होती है, जो मांस (प्रोटीन) को पचाने के लिए होती है। यह हाइड्रोक्लोरिक अम्ल सभी मांसाहारी प्राणियों की लार में होता है।

**( 2 ) मनुष्य की आँतें**—शाकाहारी प्राणियों की आँतें सामान्यत: 28 से 32 फीट लंबी होती हैं, जबकि मांसाहारी प्राणियों की आँतें 6 से 8 फीट लंबी होती हैं। शाकाहारी मनुष्य की आँतें घुमावदार होती हैं; जबकि मांसाहारी प्राणियों की आँतें सीधी-सपाट होती हैं।

**( 3 ) मनुष्य के दाँत**—अन्य शाकाहारी प्राणियों की तरह मनुष्य के दाँत भी समतल होते हैं—गाय, हिरन, घोड़ा, बैल आदि के दाँतों की तरह मनुष्य के दाँत होते हैं, परंतु मांसाहारी प्राणियों के आगे के दाँत चीरने-फाड़ने के लिए प्रकृति ने नुकीले दाँत दिए हैं। शेर, चीता, बिल्ली, कुत्ता आदि के दाँत शिकार को चीर-फाड़कर खाने के निमित्त दिए हैं।

**( 4 ) मनुष्य की आँखें**—अन्य शाकाहारी प्राणियों की तरह सामान्य होती हैं, जबकि मांसाहारी प्राणियों की आँखें अँधेरे में देखने योग्य (रात्रि में शिकार करने के लिए) तथा चमकीली होती हैं।

**( 5 ) मनुष्य के नाखून**—मनुष्य के नाखून समतल होते हैं, जबकि मांसाहारी प्राणियों के नाखून नुकीले होते हैं।

**( 6 ) मनुष्य की नींद**—शाकाहारी प्राणियों के प्राकृतिक नींद का समय रात्रि का

होता है; जबकि मांसाहारी दिन में सोते हैं और रात में विचरण करते हैं, अत: उन्हें निशाचर भी कहते हैं।

**( 7 ) मनुष्य के पंजे**—पंजे साधारण होते हैं, जबकि मांसाहारियों के पंजे गद्देदार (स्पंजी) होते हैं, जिससे ऊँची, लंबी छलाँगे लगाते समय या चलते समय पदचाप शिकार को सुनाई न दे।

**( 8 ) मनुष्य का पसीना**—मनुष्य का पसीना निकलता है; जबकि मांसाहारियों के शरीर से पसीना नहीं निकलता है।

**( 9 ) मनुष्य के बच्चों की आँखें**—अन्य शाकाहारियों की तरह मनुष्य के बच्चों की भी आँखें जन्म के समय खुल जाती हैं; जबकि मांसाहारी प्राणियों के बच्चों की आँखें जन्म के बहुत दिनों बाद खुलती हैं।

**( 10 ) मनुष्य की प्रकृति**—शाकाहारियों की मूल प्रकृति दया, करुणा, ममता, सहकार से भरी-पूरी होती है, परंतु मांसाहारियों की मूल प्रवृत्ति हिंसक एवं क्रूर होती है। कई बार तो मांसाहारी प्राणी अपने ही बच्चों को खा जाते हैं।

**( 11 ) मनुष्य को रेशे की जरूरत**—शाकाहारी प्राणियों को रेशे से मल बड़ी आँत से बाहर निकलेगा, अत: रेशा अनिवार्य है, जो शाकाहार में ही होता है। मांसाहार प्राणियों को रेशे की जरूरत नहीं होती है।

प्रकृति ने मनुष्य को पूर्णत: शाकाहारी ही बनाया है—यह तर्कपूर्ण सही तथ्य है। भगवान बुद्ध, भगवान महावीर स्वामी ने अहिंसा का जीवनभर प्रचार किया। आने वाला समय समझदार, प्रज्ञावान, बुद्धिमान लोगों का ही होगा। समय बदल रहा है। विज्ञान भी शाकाहारी को सर्वश्रेष्ठ मान रहा है। ❑

---

**एक दिन एक नदी की धारा बहुत दूर से आती हुई थक गई थी। अपनी सहेली से बोली—"मैं तो चलते-चलते अपने जीवन से ऊब गई हूँ। विश्राम करना चाहती हूँ, पर एक क्षण को भी विश्राम नहीं, ऐसा भी जीवन किस काम का ? अब तो आगे बढ़ने का मेरा इरादा नहीं है। देखो आम्र की यह सघन कुंजें कितनी शीतलता प्रदान करने वाली हैं। मैं तो इन्हीं के नीचे विश्राम करूँगी।"**

**और वह वहीं रुक गई। घनी छाया के निचले स्थान को जल से भरने लगी। दूसरी धारा आगे बढ़ती गई, पर जाते-जाते कह गई—"तू इस बात को क्यों भूलती है कि अपने जल की पावनता, स्वच्छता और शुद्धता बहते रहने में है और यदि तेरे जीवन में काम से जी चुराने ने स्थान बना लिया तो स्वाभाविक गुणों से भी हाथ धो बैठेगी।"**

**पहली धारा ने अपनी सहधारा की अनुभवजन्य बातों को सुनकर भी अनसुना कर दिया, उसकी बात पर बिलकुल भी ध्यान नहीं दिया। उसने एक सरोवर का रूप धारण कर लिया। थोड़े दिनों बाद पानी के घिरे रहने के कारण ऊपर काई की मोटी परत जम गई। पानी इतना गंदा तथा दुर्गंधयुक्त हो गया कि गाँववासियों ने उसमें अपने पशुओं को पानी पिलाना तथा कपड़े धोना तक बंद कर दिया। जीवन में सदैव कार्य करते हुए आगे बढ़ने की आदत बनी रहती है, तभी पवित्रता तथा शुद्धता बनी रहती है।**

# महर्षि गौतम की गायत्री-साधना



सप्तर्षियों में महर्षि गौतम का विशिष्ट स्थान है। वे अपनी तपशक्ति के लिए विख्यात हैं। एक समय की बात है कि पृथ्वी पर घोर दुष्काल पड़ा। अनावृष्टि के कारण सब ओर सूखा-ही-सूखा दिखाई पड़ने लगा। सर, सरिता सब सूख गए। पशु-पक्षी सभी जल के लिए भटकने लगे। घरों में मनुष्यों की लाशें सड़ने लगीं। नीचे से पृथ्वी का रस सूखा और ऊपर से सूर्य का ताप इतना बढ़ा कि अग्नि वर्षा-सी होने लगी। यह बात सभी जानते थे कि महर्षि गौतम की तपशक्ति बहुत बढ़ी-चढ़ी थी। गौतम गायत्री महाशक्ति के उपासक थे। सर्वत्र घोर दुर्भिक्ष होते हुए भी उनके आश्रम की भूमि सुरक्षित थी। वहाँ जल की और अन्न की कोई कमी नहीं थी।

इस स्थिति में बहुत-से ब्राह्मण एकत्र होकर आश्रम पर पहुँचे और अपना कष्ट कह सुनाया। महर्षि ने उन्हें हर प्रकार से सांत्वना दी और उनसे वहीं रहने का अनुरोध किया। तदंतर उनने भगवती गायत्री से प्रार्थना की। "अंबे! मैं तुम्हें बार-बार नमस्कार करता हूँ। तुम प्राणियों की विपत्तियों को दूर करने में समर्थ हो, इस घोर दुर्भिक्ष के समय में भी प्राणियों की सेवा कर सकूँ, ऐसा बल दो। जगज्जननी तुम ही इस घोर संकट से उद्धार करने वाली हो।"

माता गायत्री ने प्रकट होकर कहा—"महर्षि! मैं तुम्हें यह अक्षय पात्र देती हूँ। कल्पवृक्ष के समान यह पात्र तुम्हारी इच्छित वस्तुओं से सदा पूर्ण रहेगा।" वही हुआ। अक्षय पात्र के द्वारा अन्न, वस्त्र, आभूषण, धन-धान्य सभी के ढेर लग गए। गौतम ऋषि जब जिस वस्तु की इच्छा करते, तभी उस वस्तु को अक्षय पात्र पूर्ण कर देता। उस समय वह आश्रम चारों ओर सौ-सौ योजन बढ़ गया। यज्ञ के द्वारा देवगण भी यज्ञ भाग पाते हुए प्रसन्न थे। गौतम का यश सर्वत्र छा गया था। इंद्र ने भी अत्यंत प्रशंसा की। भगवती गायत्री के अनुग्रह से वे बारह वर्षों तक, जब तक दुर्भिक्ष रहा, परिवारों का भरण-पोषण करते रहे।

महर्षि गौतम ने प्राणिमात्र के कल्याण की जो प्रार्थना गायत्री माता से की थी, उसके फलस्वरूप जलवृष्टि और धन-धान्यादि की उत्पत्ति होने लगी। सूर्य का ताप अपनी विकरालता छोड़कर पूर्वमान पर आ गया। तप से उत्पन्न हुए उत्कर्ष को कुछ ईर्ष्यालु व्यक्ति सहन नहीं कर सके। उन्होंने माया की एक गाय निर्मित की, जिसकी देह जीर्ण-शीर्ण थी। उनकी प्रेरणा से वह गौ महर्षि के आश्रम के सामने जाकर मर गई। तब उन दुष्टों ने उसकी हत्या का आरोप महर्षि गौतम पर लगाने की चेष्टा की।

महर्षि को इस कार्य से अत्यंत क्षोभ हुआ। वे नेत्र मूँदकर समाधि में लीन हो गए। तब उन्हें इस कुचाल का पता लग गया। समाधि भंग होने पर उनने उन्हें शाप दिया—"मूर्खो! तुम अपने कर्म का फल भोगो और वेदादि कर्मों से विमुख हो अधमगति को प्राप्त करो।" शाप के कारण उन ईर्ष्यालु व्यक्तियों का भी ज्ञान लुप्त

हो गया। उन्होंने जो कुछ अध्ययन आदि किया था, उस सबको भी वे भूल गए। उनका सम्मान नष्ट हो गया। समाज में उनकी प्रतिष्ठा न रही। सभी मनुष्य उनसे घृणा करने लगे। उन्हें अपने दुष्कर्म पर पश्चात्ताप हुआ और इस स्थिति से मुक्त होने के लिए झिझकते हुए, ऋषि के चरण पकड़कर क्षमा-याचना करने लगे। उन्होंने कहा—''महर्षि! हमारे दुष्कर्मों को क्षमा कर दीजिए। हे ऋषिश्रेष्ठ! हम पर प्रसन्न हो जाइए। हमारे अपराध को भूल जाइए।''

उनका रुदन सुनकर गौतम ऋषि का हृदय करुणा से भर उठा। वे बोले—''भगवती गायत्री की उपासना से तुम्हारा कल्याण संभव है, अत: एकाग्र मन से उन्हीं का जप करो।'' इतना कहकर उन्होंने उन्हें क्षमा कर दिया। वस्तुत: गायत्री महामंत्र में अपरिमित सामर्थ्य है। इसकी उपासना जीवन में सुख, वैभव, शांति-आत्मतुष्टि, यश, कीर्ति तथा आत्मबल जैसे सभी अनुदानों के बरसने का निमित्त बनती है। ❐

# आवश्यक सूचना

1. कोई भी संदेश ( फोन, ई-मेल, व्हाट्सएप ) व्यक्तिगत न भेजें, न कोई धनराशि व्यक्तिगत भेजें। व्यक्तिगत संदेश एवं भेजी गई धनराशि पर कार्रवाई करना संभव न होगा। केवल संस्थागत फोन, ई-मेल, व्हाट्सएप पर ही संदेश एवं राशि भेजें।
2. सभी पत्र-व्यवहार, ई-मेल, व्हाट्सएप संदेश में अपना पूरा नाम, पता, पिनकोड, मेल आई.डी., मोबाइल नंबर, व्हाट्सएप नंबर का उल्लेख अवश्य करें, ताकि त्वरित कार्रवाई की जा सके।
3. अखण्ड ज्योति संस्थान एवं युग निर्माण योजना, गायत्री तपोभूमि पर्याप्त दूरी पर हैं। अत: संदेश अलग-अलग पतों पर ही भेजें। संयुक्त संदेश, धनराशि भेजने से कार्रवाई में विलंब होता है।
4. राशि भेजने के पश्चात जमापर्ची के साथ पूरा संदेश भेजें, ताकि समायोजन हो सके।
5. अब रजिस्टर्ड सेवा डाक विभाग द्वारा बंद कर दी गई है। जब भी पत्रिका न पहुँचे, तुरंत सूचित करें। दोबारा भिजवाने की व्यवस्था की जाएगी।

**समस्त पत्र व्यवहार, फोन, ई-मेल के लिए संपर्क सूत्र**

***पता—युग निर्माण योजना, गायत्री तपोभूमि, मथुरा*-281 003**

**Email id : yugnirman@yugnirmanyojna.org**
**Website : www.yugnirmanyojna.org**
**Youtube : youtube.com/@yugnirmanyojnaofficial**
**Facebook : Yug Nirman Yojna Mathura**
**फोन नं. ( 0565 ) 2530115, 2530128, 2530399, मो० 09927086287, 09927086289 व्हाट्सएप नं. 7055514422**

हो गया। उन्होंने जो कुछ अध्ययन आदि किया था, उस सबको भी वे भूल गए। उनका सम्मान नष्ट हो गया। समाज में उनकी प्रतिष्ठा न रही। सभी मनुष्य उनसे घृणा करने लगे। उन्हें अपने दुष्कर्म पर पश्चात्ताप हुआ और इस स्थिति से मुक्त होने के लिए झिझकते हुए, ऋषि के चरण पकड़कर क्षमा-याचना करने लगे। उन्होंने कहा—"महर्षि! हमारे दुष्कर्मों को क्षमा कर दीजिए। हे ऋषिश्रेष्ठ! हम पर प्रसन्न हो जाइए। हमारे अपराध को भूल जाइए।"

उनका रुदन सुनकर गौतम ऋषि का हृदय करुणा से भर उठा। वे बोले—"भगवती गायत्री की उपासना से तुम्हारा कल्याण संभव है, अत: एकाग्र मन से उन्हीं का जप करो।" इतना कहकर उन्होंने उन्हें क्षमा कर दिया। वस्तुत: गायत्री महामंत्र में अपरिमित सामर्थ्य है। इसकी उपासना जीवन में सुख, वैभव, शांति-आत्मतुष्टि, यश, कीर्ति तथा आत्मबल जैसे सभी अनुदानों के बरसने का निमित्त बनती है। ❐

# आवश्यक सूचना

1. कोई भी संदेश ( फोन, ई-मेल, व्हाट्सएप ) व्यक्तिगत न भेजें, न कोई धनराशि व्यक्तिगत भेजें। व्यक्तिगत संदेश एवं भेजी गई धनराशि पर कार्रवाई करना संभव न होगा। केवल संस्थागत फोन, ई-मेल, व्हाट्सएप पर ही संदेश एवं राशि भेजें।
2. सभी पत्र-व्यवहार, ई-मेल, व्हाट्सएप संदेश में अपना पूरा नाम, पता, पिनकोड, मेल आई.डी., मोबाइल नंबर, व्हाट्सएप नंबर का उल्लेख अवश्य करें, ताकि त्वरित कार्रवाई की जा सके।
3. अखण्ड ज्योति संस्थान एवं युग निर्माण योजना, गायत्री तपोभूमि पर्याप्त दूरी पर हैं। अत: संदेश अलग-अलग पतों पर ही भेजें। संयुक्त संदेश, धनराशि भेजने से कार्रवाई में विलंब होता है।
4. राशि भेजने के पश्चात जमापर्ची के साथ पूरा संदेश भेजें, ताकि समायोजन हो सके।
5. अब रजिस्टर्ड सेवा डाक विभाग द्वारा बंद कर दी गई है। जब भी पत्रिका न पहुँचे, तुरंत सूचित करें। दोबारा भिजवाने की व्यवस्था की जाएगी।

**समस्त पत्र व्यवहार, फोन, ई-मेल के लिए संपर्क सूत्र**

***पता—युग निर्माण योजना, गायत्री तपोभूमि, मथुरा-281 003***

**Email id : yugnirman@yugnirmanyojna.org**
**Website : www.yugnirmanyojna.org**
**Youtube : youtube.com/@yugnirmanyojnaofficial**
**Facebook : Yug Nirman Yojna Mathura**
**फोन नं. ( 0565 ) 2530115, 2530128, 2530399, मो० 09927086287, 09927086289 व्हाट्सएप नं. 7055514422**

हो गया। उन्होंने जो कुछ अध्ययन आदि किया था, उस सबको भी वे भूल गए। उनका सम्मान नष्ट हो गया। समाज में उनकी प्रतिष्ठा न रही। सभी मनुष्य उनसे घृणा करने लगे। उन्हें अपने दुष्कर्म पर पश्चात्ताप हुआ और इस स्थिति से मुक्त होने के लिए झिझकते हुए, ऋषि के चरण पकड़कर क्षमा-याचना करने लगे। उन्होंने कहा—"महर्षि! हमारे दुष्कर्मों को क्षमा कर दीजिए। हे ऋषिश्रेष्ठ! हम पर प्रसन्न हो जाइए। हमारे अपराध को भूल जाइए।"

उनका रुदन सुनकर गौतम ऋषि का हृदय करुणा से भर उठा। वे बोले—"भगवती गायत्री की उपासना से तुम्हारा कल्याण संभव है, अतः एकाग्र मन से उन्हीं का जप करो।" इतना कहकर उन्होंने उन्हें क्षमा कर दिया। वस्तुतः गायत्री महामंत्र में अपरिमित सामर्थ्य है। इसकी उपासना जीवन में सुख, वैभव, शांति-आत्मतुष्टि, यश, कीर्ति तथा आत्मबल जैसे सभी अनुदानों के बरसने का निमित्त बनती है। ❐

# आवश्यक सूचना

1. कोई भी संदेश ( फोन, ई-मेल, व्हाट्सएप ) व्यक्तिगत न भेजें, न कोई धनराशि व्यक्तिगत भेजें। व्यक्तिगत संदेश एवं भेजी गई धनराशि पर कार्रवाई करना संभव न होगा। केवल संस्थागत फोन, ई-मेल, व्हाट्सएप पर ही संदेश एवं राशि भेजें।
2. सभी पत्र-व्यवहार, ई-मेल, व्हाट्सएप संदेश में अपना पूरा नाम, पता, पिनकोड, मेल आई.डी., मोबाइल नंबर, व्हाट्सएप नंबर का उल्लेख अवश्य करें, ताकि त्वरित कार्रवाई की जा सके।
3. अखण्ड ज्योति संस्थान एवं युग निर्माण योजना, गायत्री तपोभूमि पर्याप्त दूरी पर हैं। अतः संदेश अलग-अलग पतों पर ही भेजें। संयुक्त संदेश, धनराशि भेजने से कार्रवाई में विलंब होता है।
4. राशि भेजने के पश्चात जमापर्ची के साथ पूरा संदेश भेजें, ताकि समायोजन हो सके।
5. अब रजिस्टर्ड सेवा डाक विभाग द्वारा बंद कर दी गई है। जब भी पत्रिका न पहुँचे, तुरंत सूचित करें। दोबारा भिजवाने की व्यवस्था की जाएगी।

**समस्त पत्र व्यवहार, फोन, ई-मेल के लिए संपर्क सूत्र**

***पता—युग निर्माण योजना, गायत्री तपोभूमि, मथुरा-281 003***

**Email id : yugnirman@yugnirmanyojna.org**
**Website : www.yugnirmanyojna.org**
**Youtube : youtube.com/@yugnirmanyojnaofficial**
**Facebook : Yug Nirman Yojna Mathura**
**फोन नं. ( 0565 ) 2530115, 2530128, 2530399, मो० 09927086287, 09927086289 व्हाट्सएप नं. 7055514422**

# जीवन में वित्तीय अनुशासन का महत्व

पिछले 19 मार्च को हम लोगों ने हिंदू नव वर्ष उत्सव मनाया। पूर्व संध्या पर गायत्री तपोभूमि में सांस्कृतिक कार्यक्रम हुआ। अन्य स्थानों से भी इसी प्रकार के समाचार प्राप्त हुए हैं। 31 मार्च को वित्त वर्ष 2025-26 का समापन हो रहा है और 1 अप्रैल, 2026 से नए वित्त वर्ष 2026-27 का शुभारंभ होगा। जो आयकर देने वाले व्यक्ति तथा कंपनियाँ/संस्थाएँ हैं, वे सभी बीतने वाले वित्त वर्ष का हिसाब-किताब तैयार करेंगे और इसे ऑडिट कराकर अंतिम रूप देंगे।

इस संबंध में हमारे ऋषितंत्र प्रणीत अध्यात्म विज्ञान का क्या दृष्टिकोण है, इसे समझने तथा हृदयंगम किए जाने की भी आवश्यकता है।

हमारी सनातन व्यवस्था में शास्त्रों के अनुसार चार प्रकार के संयम का उल्लेख है—इंद्रिय-संयम, **अर्थ-संयम**, समय-संयम और विचार-संयम। पुरुषार्थ चतुष्टय में महत्त्व दिया गया है—धर्म, **अर्थ**, काम, मोक्ष को। श्रीमद्भगवद्गीता के दसवें अध्याय श्लोक 23 'विभूतियोग' में भगवान श्री कृष्ण कहते हैं कि सभी विभूतियों में तुम मुझे देखो।

**रुद्राणां शंकरश्चास्मि वित्तेशो यक्षरक्षसाम्।**
**वसूनां पावकश्चास्मि मेरुः शिखरिणामहम्॥**

मैं एकादश रुद्रों में शंकर हूँ और यक्ष तथा राक्षसों में धन का स्वामी कुबेर हूँ। मैं आठ वसुओं में अग्नि हूँ और शिखर वाले पर्वतों में सुमेरु पर्वत हूँ।

श्रीरामचरितमानस के सुंदरकांड में उल्लेख है कि माँ सीता की खोज में हनुमान जी लंका में प्रवेश कर गए तो सामने एक विशाल पर्वत देखकर दौड़े और उस पर चढ़ गए। भगवान शिव कहते हैं—हे उमा! इसमें वानर हनुमान की कुछ भी बड़ाई नहीं है। यह प्रभु का प्रताप है। पर्वत पर चढ़कर उन्होंने लंका देखी। बहुत बड़ा किला है, जिसका वर्णन नहीं किया जा सकता।

**उमा न कछु कपि कै अधिकाई।**
**प्रभु प्रताप जो कालहि खाई॥**
**गिरि पर चढ़ि लंका तेहिं देखी।**
**कहि न जाइ अति दुर्ग बिसेषी॥**
**कनक कोट बिचित्र मनि,**
**कृत सुंदरायतना घना।.....**
**बहुरूप निसिचर जूथ अतिबल,**
**सेन बरनत नहिं बनै॥**

**भावार्थ**—विचित्र मणियों से जड़ा हुआ **सोने** का परकोटा, उसके अंदर बहुत से सुंदर-सुंदर घर हैं। वहाँ अति बलशाली राक्षसों के अनेक समूह हैं, जिनका वर्णन करना भी कठिन है।

सर्वविदित है कि सोने की लंका को हनुमान जी ने जला कर राख में बदल दिया। कबीरदास जी ने ठीक ही कहा है—

**'इक लाख पूत सवा लख नाती।**
**तिह रावन घर दिया न बाती॥'**

तात्पर्य यह है कि भौतिक उपलब्धियों (धन-दौलत, सोना-चाँदी) की जो महिमा गाई जाती है, वह वास्तविकता से हटकर है। रावण के सोने की लंका की अपेक्षा उसी लंका में रहने वाले विभीषण की कुटिया का कुछ अधिक महत्त्वपूर्ण स्थान है।

श्री हनुमान जी अत्यंत छोटा रूप बनाकर सोने की लंका में विचरण करते हुए सीता जी को खोजने का प्रयास करने लगे। रावण के महल में भी वे न दिखीं, फिर आगे बढ़े तो एक ऐसा भवन मिला, जहाँ विभीषण का निवास था। विभीषण ने जो सूत्र बताए, उनके आधार पर ही वे अशोक वाटिका में पहुँचने में सफल हुए। यहाँ महत्त्व सोने का नहीं, बल्कि ईश्वरीय अनुशासन पर चलने को दिया गया है, प्रभु समर्पित जीवन को दिया गया है।

वाङ्मय क्र०-2 'जीवन देवता की साधना-आराधना' के अध्याय-10 पृष्ठ, 15 पर गुरुदेव कहते हैं—जो कम-से-कम साधनों से अपना गुजारा चलाता है और पास में यदि कुछ हो तो उसे भी लोक-मंगल के लिए अर्पित करता है उसे ही अपरिग्रही कहा जाता है। वाङ्मय क्र०-10 'गायत्री-साधना का गुह्य विवेचन' के अध्याय-5 के पृष्ठ-169 पर वे लिखते हैं—'उदारता से मनुष्य की मानसिक शक्तियों का अद्भुत विकास होता है। जो व्यक्ति अपने कमाए धन का जितना अधिक उपयोग लोक-मंगल हेतु करता है, वह अपने अंदर और धन कमा सकने का उतना ही अधिक आत्मविश्वास उत्पन्न कर लेता है। इसी पृष्ठ पर वे आगे लिखते हैं—'स्वार्थी मनुष्य की संतान निकम्मी ही नहीं, वरन क्रूर भी होती है।'

**संदेश**

संदेश यह है कि सामान्य लोग धर्म के माध्यम से अर्थोपार्जन करें। इन दिनों हमें विचार करना चाहिए—क्या हमने पिछले वर्ष निज श्रम द्वारा कमाए गए धन का सदुपयोग किया है, क्या हमने अगले वर्ष के लिए 'अर्थ-संयम' अर्थात वित्तीय अनुशासन को महत्त्व देने का संकल्प किया है?

वाङ्मय क्र०-28 'सूक्ष्मीकरण एवं उज्ज्वल भविष्य का अवतरण-1' अध्याय-6, पृष्ठ-13 पर पूज्य गुरुदेव लिखते हैं—'हिसाब-किताब के मामले में अपनी स्थिति शीशे की तरह स्पष्ट रखनी चाहिए। सार्वजनिक धन की पाई-पाई का हिसाब इस प्रकार खुला हुआ रखें कि उसे कोई, कभी भी देख सके और हेरा-फेरी किए जाने का इलजाम लगाने का साहस न कर सके। निरंतर आत्मसमीक्षा करके स्वयं देखना पड़ेगा कि जो दूसरों से कराया जाना है, वह स्वयं से किया गया कि नहीं। यह बात हजार बार स्मरण रखने की है कि हर युगशिल्पी एक साँचा है। उससे चिपकने वाले वैसे ही बनेंगे, जैसा कि वह स्वयं है। हजार आँखें जिस पर गड़ी हों, उसे श्रेष्ठता की हर कसौटी पर अपने को कसते रहना चाहिए, ताकि कहीं उँगली उठने की गुंजाइश न रहे।' ❐

# ज्ञातव्य

## परिजन कृपया ध्यान दें

★ शिविरों में भाग लेने के लिए एक दिन पूर्व पधारें।

★ बिना स्वीकृति के न आएँ। 30 माला गायत्री मंत्र प्रतिदिन जप करने वाले ही साधना शिविरों में आएँ।

★ आवास की व्यवस्था ऊपर की मंजिलों में रहेगी।

★ अपना नाम, पूरा पता, पिन कोड, मोबाइल नंबर, ई-मेल, पद-व्यवसाय, आधार कार्ड नंबर, जन्म-तिथि आदि का पूरा विवरण दें।

★ शिविरों में अतिवृद्ध, बीमार, अनुशासन पालन करने में असमर्थ परिजन न आएँ।

## नौदिवसीय अनुष्ठान साधना आगामी शिविर

| अप्रैल, 2026 | मई, 2026 | जून, 2026 | जुलाई, 2026 |
|---|---|---|---|
| 01 से 09 | 01 से 09 | 01 से 09 | 01 से 09 |
| 11 से 19 | 11 से 19 | 11 से 19 | 11 से 19 |
| 21 से 29 | 21 से 29 | 21 से 29 | 21 से 29 |

## युग निर्माता शिक्षक सम्मेलन

### [ 11 जून से 13 जून, 2026 ]

गायत्री तपोभूमि के पावन, दिव्य एवं संस्कारित वातावरण में **युग निर्माता शिक्षक सम्मेलन** आयोजित किया जा रहा है। भाग लेने के इच्छुक परिजन **10 जून** की सायंकाल तक अवश्य आ जाएँ। **13 जून** को दोपहर बाद विदाई हो जाएगी। जो शिक्षक बंधु और बहनें आ रही हैं वे अपने नाम, पते, मोबाइल नंबर, ई-मेल अथवा डाक से अवश्य भेज दें।

## पुस्तक मेला समाचार

धोरीमन्ना (बाड़मेर) राज.—स्थानीय प्रज्ञापीठ एवं प्रज्ञामंडल, अरणिचाली के सभी परिजनों ने मिलकर जीवनोपयोगी युगसाहित्य के प्रथम पुस्तक मेला का सफल आयोजन संपन्न किया।

भावनाशील दानदाताओं के सहयोग से समस्त साहित्य ब्रह्मभोज में आधे मूल्य में उपलब्ध कराया गया। कई प्रबुद्ध एवं संभ्रांतजनों ने पुस्तक मेले का अवलोकन करके ऐसे सत्प्रयास की भूरि-भूरि सराहना करते हुए सद्ज्ञान प्राप्ति हेतु सत्साहित्य पुस्तक मेलों का महत्त्व प्रतिपादित किया।

# माता सरस्वती शिविर, गायत्री तपोभूमि, मथुरा

**[ केवल 14 वर्ष से अधिक उम्र के छात्र-छात्राओं के लिए ]**

यह शिविर छात्र-छात्राओं के नैतिक, बौद्धिक स्तर को सुदृढ़ करने हेतु व्यक्तित्व विकास की दृष्टि से आयोजित किया गया है। इस शिविर में पढ़ने, याद करने की विधि, बुद्धि कुशाग्र करने, स्मरणशक्ति बढ़ाने, योग-आसन-प्राणायाम-ध्यान, जीवन जीने की कला, सत्प्रवृत्ति-संवर्द्धन, दुष्प्रवृत्ति-उन्मूलन का प्रशिक्षण होगा। गायत्री मंत्र लेखन-साधना होगी। अनुशासनप्रिय, अच्छी आदतों, अच्छे चरित्र के विद्यार्थियों के लिए यह स्वर्णिम अवसर है। **निम्न पते पर अथवा 7055514422 पर अपना नाम, पूरा पता, जन्मतिथि तथा कक्षा, मोबाइल नंबर आदि विवरण सहित आवेदन करें। बिना स्वीकृति के न आएँ।** अपने साथ दैनिक उपयोग के वस्त्र, चादर, तेल, कंघा, मंजन-ब्रुश, साबुन, पानी की बोतल आदि आवश्यक वस्तुएँ लेकर आएँ। शिविर के अंतिम दिन विदाई दोपहर 12 बजे होगी। नित्य 5.00 बजे जागरण से रात्रि 8.30 बजे तक व्यस्त निर्धारित दिनचर्या रहती है, जिसका पालन करना अनिवार्य होता है। अनुशासनहीन बच्चे न आएँ। लड़के-लड़कियाँ ग्रुप में अथवा अपने अभिभावकों के साथ आ सकते हैं। अभिभावक भी गायत्री-साधना करेंगे। **हर छात्र अथवा छात्रा अपने साथ एक चादर अवश्य लेकर आएँ।** बीच में शिविर छोड़कर जाना मना है। घूमने जाना हो तो पहले या बाद में जाएँ।

**छात्राओं का शिविर**
23 से 29 मई, 2026

**छात्रों का शिविर**
02 से 08 जून, 2026

# प्राकृतिक चिकित्सा के शरीर-शोधन शिविर

यहाँ शरीर-शोधन शिविर रोग-प्रतिरोधक शक्ति बढ़ाने के लिए तथा सामान्य शारीरिक एवं मानसिक कष्ट-कठिनाइयाँ दूर करने के लिए प्रतिमाह निरंतर आयोजित किए जा रहे हैं, इनसे सैकड़ों परिजनों को आशातीत लाभ हुआ है। आप भी इन शिविरों का लाभ उठा सकते हैं एवं अपने संपर्क-क्षेत्र के परिजनों को इसके लिए प्रेरित कर सकते हैं। शरीर-शोधन शिविर की आगामी तिथियाँ निम्नलिखित हैं—

| **अप्रैल**, 2026 | **मई**, 2026 | **जून**, 2026 | **जुलाई**, 2026 |
|---|---|---|---|
| *दि. 1 से 7* | *दि. 1 से 7* | *दि. 1 से 7* | *दि. 1 से 7* |
| *दि. 11 से 17* | *दि. 11 से 17* | *दि. 11 से 17* | *दि. 11 से 17* |
| *दि. 21 से 27* | *दि. 21 से 27* | *दि. 21 से 27* | *दि. 21 से 27* |

**स्वास्थ्यार्थी को जो शुल्क जमा करना है, वह निम्नानुसार है—**

1. सामान्य कमरा—[दो व्यक्तियों का शुल्क-14,000/-]
2. प्राइवेट सामान्य कमरा—[एक व्यक्ति का शुल्क-10,000/-]
3. प्राइवेट वातानुकूलित कमरा—[एक व्यक्ति का शुल्क-14,000/-]
4. वातानुकूलित कमरा—[दो व्यक्तियों का शुल्क-20,000/-]


**समस्त पत्र व्यवहार, फोन, ई-मेल के लिए संपर्क सूत्र**

**पता—युग निर्माण योजना, गायत्री तपोभूमि, मथुरा-281 003**

फोन नं० : (0565) 2530115, 2530128, 2530399, मो.— 09927086287, 09927086289

*Email id : yugnirman@yugnirmanyojna.org,* व्हाट्सएप नंबर-*7055514422*

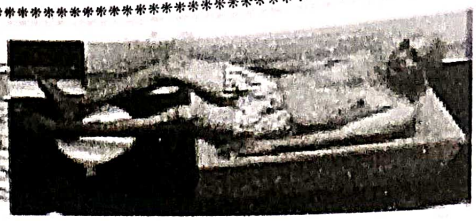
*Website : www.yugnirmanyojna.org*

*Youtube : youtube.com/@yugnirmanyojnaofficial*

*Facebook : Yug Nirman Yojna Mathura*

प्राकृतिक चिकित्सा

# स्पाइनल बाथ



**साधन**—रीढ़ स्नान के लिए प्राकृतिक चिकित्सालयों में टब बना होता है, जिसका माप इस प्रकार होता है। लंबाई तीन फीट, चौड़ाई डेढ़ फीट तथा ऊँचाई एक फुट होती है।

गरमी में 30–40 फे.हा. तथा सरदी के दिनों में 40–50 फे.हा. ताप का पानी टब में 2 से 3 इंच भर देते हैं।

नए स्वरूप में अब स्पाइनल स्प्रे यंत्र भी प्रचलन में आ गया है, जिसमें मोटर द्वारा विशेष यंत्र से रीढ़ पर पानी का स्प्रे देकर नाड़ी तंत्र को उद्दीप्त करते हैं ठंढा, सामान्य या गरम पानी का स्प्रे स्पाइनल बाथ के रूप में परिस्थिति के अनुसार निर्धारित करते हैं। इसमें उपचारार्थी को कुसीनुमा यंत्र पर बिठाकर उपचार देते हैं।

## समयावधि

यह स्नान साधारण अवस्था में 15 से 20 मिनट तक लिया जा सकता है।

## विधि

रोगी को रीढ़ स्नान कराने से पहले उसका शरीर गरम होना चाहिए। अगर शरीर ठंढा हो तो टब में 2 से 3 इंच ठंढा पानी रखकर रोगी को टब में लिटा देना चाहिए। जिससे कि उसका रीढ़ सहित पीठ का हिस्सा पानी में लगा रहे, पैर टब के बाहर स्टूल पर रहने चाहिए। सिर के नीचे तकिया की तरह पानी भरी रबर की थैली या रैक्जीन की तकिया रखी जा सकती है। इस स्नान के बाद मरीज को कंबल ओढ़ाकर लिटा देना चाहिए। यह उपचार भोजन के 2–3 घंटे बाद देना चाहिए।

## टब के अभाव में रीढ़ स्नान

सूती कपड़े को भिगोकर, मोड़कर चार परत करें। 6 इंच चौड़ा व 2 फीट लंबा आकार बना लें तथा तख्त पर बिछा दें। रोगी को उस पर लिटा दें। रीढ़ की हड्डी पट्टी पर रहे, यह सावधानी रखें।

## क्रिया-प्रतिक्रिया

मेरुदंड या रीढ़ से निकलने वाला नाड़ी समूह तथा रीढ़-रज्जु में रक्त का संचार इस स्नान के बाद बढ़ जाता है। परिणास्वरूप उनकी कार्यक्षमता बढ़ जाती है। मस्तिष्क को शांति मिलती है, इससे सारे शरीर में चेतनता आती है तथा नाड़ी-मंडल की कमजोरी दूर होकर जीवनीशक्ति बढ़ती है।

## लाभ-उपयोगिता

अनिद्रा, तनाव, दुश्चिंता, दिमागी बेचैनी, शारीरिक बेचैनी, माइग्रेन, दिमागी गरमी, गरदन तोड़ ज्वर, लू, क्रोध, गरमी, चक्कर, पेशाब में जलन, आंत्रव्रण की तीव्रावस्था, रीढ़ में अत्यधिक तीव्र वेदना, आंतरिक ज्वर की बेहोशी, हृदय-स्पंदन, आँतों की गरमी बढ़ने, अवसाद, नाड़ी दौर्बल्य, टायफाइड, मियादी बुखार, प्रलाप, पित्त की उलटी में, पेशाब कम बनने पर, आँखों के रोग, चेचक की बेचैनी, गुरदे की खराबी में, एलर्जिक घमौरी में, दूध या मठा के कल्पकाल की बेचैनी में, उच्च रक्तचाप में, मिरगी, हिस्टीरिया में उपरोक्त उपचार लाभप्रद है।

## निषेध

ज्वर की कँपकँपी वाली अवस्था में, निमोनिया, साइटिका, कमरदरद, तीव्र सरदी-जुकाम में उपचार न दें।

## सावधानियाँ

(1) खाने के दो घंटे बाद उपचार देते हैं।

(2) रीढ़ स्नान के बाद शरीर में गरमी लाना अनिवार्य है।

(3) रीढ़ स्नान के 1-2 घंटे बाद तक भोजन न करें।

(4) आवश्यक परिस्थितियों को छोड़कर प्राय: इस उपचार को दोपहर 2-3 बजे देते हैं।

**अन्य प्रयोग—**

रीढ़ की गरम-ठंढी सेंक भी दे सकते हैं। रीढ़ में सूजन एवं दरद की स्थिति में तीन मिनट गरम एवं एक मिनट ठंढी सेंक (तीन बार) तथा चौथी बार 3 मिनट गरम तथा 3 मिनट ठंढा उपचार देकर 18 मिनट का प्रयोग पूरा किया जाता है। सेंक के लिए रबर की थैली में गरम पानी भरकर उपयोग करें तथा ठंढी सेंक के लिए ठंढे पानी में भिगोकर सूती कपड़ा उपयोग में ला सकते हैं।

## जल-उपचारों से लाभ पर एक दृष्टि

उपचारों में ठंढे पानी का ही उपयोग किया जाता है। जिस प्रकार नंगे बदन ठंढे पानी के छींटे पड़ने पर फुरफुरी-सी आती है, रोएँ खड़े हो जाते हैं, उसी की प्रतिक्रियास्वरूप रक्त-संचार की गति तेज होती है। इसी प्रकार इन स्नानों में जहाँ शीतल पानी का स्पर्श होता है, वहाँ पहले तो गरमी की कमी हो जाती है, पर बाद में उस कमी की पूर्ति के लिए भीतर का रक्त वहाँ खिंच आता है। अधिकांश रोगों की जड़ पेट संबंधी खराबी अथवा कब्ज ही होती है। उसका दूषित विकार नीचे के हिस्से में ही रहता है। कटि स्नान द्वारा इसी भाग को चैतन्य किया जाता है। इससे पुराने और सड़े मल के निकलने में सहायता मिलती है। विशेष अवस्था में कटि स्नान और एनिमा—दोनों का प्रयोग किया जाता है, जिससे शरीर की शुद्धि शीघ्रतापूर्वक होती है। पुरुष और स्त्रियों के प्रजनन अंगों का अग्रभाग समस्त स्नायविक नाड़ी जाल का केंद्र माना गया है, उसे शीतलता पहुँचाकर, वहाँ की हानिकारक गरमी को निकाल देने से समस्त शरीर को नवजीवन और स्फूर्ति की प्राप्ति होती है। रीढ़ के बीच होकर ही ज्ञान-तंतुओं का मुख्य संस्थान है, इसलिए रीढ़ को जल या जलधारा अथवा भीगे कपड़े की पट्टी द्वारा ठंढक पहुँचाने से मस्तिष्क की निर्बलता दूर होती है। जीवनी शक्ति (रोग निवारक शक्ति) में असाधारण वृद्धि होती है।

**किसी व्यक्ति ने सुना—बीस फीट मिट्टी खोद लेने से पानी निकल आता है; कुआँ बन जाता है। वह कुआँ खोदने में लग गया। बीस की जगह पच्चीस फीट खुद गया, फिर भी पानी नहीं निकला। वह व्यक्ति उस आदमी के पास गया और पानी न निकलने की शिकायत की। अगले दिन उस व्यक्ति ने जाकर देखा तो पाया कुआँ खोदा तो गया, पर गहराई में नहीं, लंबाई में। उसने कहा—"भाई! इतना परिश्रम करने की अपेक्षा पहले विधि पूछ लेते तो अच्छा था। ज्ञान की सार्थकता उसे पूरी तरह समझ लेने में ही है।**

# वयोवृद्ध ऐसे जिएँ

प्रकृति के नियमों में बालपन के बाद यौवन और यौवन के बाद वृद्धता का अनिवार्य क्रम है। इसके बाद जरा-जीर्ण असमर्थ शरीर का परिवर्तन हो जाता है और मरण द्वारा वह सब कुछ संभव हो जाता है।

इस प्रकृति क्रम में यह कहीं प्रावधान नहीं कि मनुष्य अपनी उपयोगिता, क्षमता गँवा बैठे। बचपन विकास का समय है, तो भी बालक स्वयं हँसते-हँसाते रहते हैं। बड़े होने पर वे कुछ कर सकेंगे, उसका स्पष्टीकरण किए बिना भी यह सिद्ध करते रहते हैं कि उनका वर्तमान न सही, भविष्य बहुत ही प्रेरणाप्रद उत्साह से भरा-पूरा है। इस अप्रत्यक्ष आश्वासन पर भी परिवार के लोग आशान्वित रहते और प्रसन्नता व्यक्त करते हैं। जवानी तो अपनी जगह सही है ही, यदि उसका सदुपयोग किया जा सके तो वे सभी उपलब्धियाँ उपलब्ध हो सकती हैं, जिनकी आशा मनुष्य जीवन जैसे बहुमूल्य सुयोग से की जाती है। वह शारीरिक और मानसिक दृष्टि से इतना समर्थ होता है कि न केवल स्वयं ही स्वावलंबी रहे, वरन परिवार और समाज को भी समुचित सहारा देता रहे।

अभिशाप वृद्धावस्था ही सिद्ध होती है, उनकी समस्या विश्व के अर्थशास्त्रियों और समाजशास्त्रियों के लिए चिंताजनक बनती जा रही है। कुछ समय पूर्व तक ऐसी स्थिति थी कि लोग ढलती आयु में ही कूच कर जाते थे, पर अब आरोग्य शास्त्र की जानकारी और चिकित्साजन्य सुविधाओं ने यह संभव कर दिया है कि अपेक्षाकृत अधिक लंबे समय तक जिया जा सके। शतायुष्यों की संख्या तो उतनी नहीं बढ़ी है, जितनी कि दीर्घजीवी वयोवृद्धों की। इस उम्र का शरीर भी किसी सेवाकार्य में भी काम नहीं आता। उलटा दुर्बलताजन्य अनेकों छोटी-बड़ी बीमारियों से घिरा रहता है और परिवारवालों को सेवा-परिचर्या एवं दवा का खरच उठाने के लिए विवश करता है।

वृद्धावस्था वस्तुतः उतनी भारी नहीं होती, जिसे वहन करने वाले ऊबें और मरने की कामना करें। परिवारवाले उनकी उपस्थिति को भार समझें और समाज के कर्णधार उन्हें एक प्रकार की राष्ट्रीय विपत्ति समझें एवं उनकी विकट समस्या को हल करने के लिए परेशान रहें। वृद्ध पशुओं की तरह उन्हें बूचड़खाने भी तो नहीं भेजा जा सकता।

विचारणीय है कि जहाँ वयोवृद्धों के विकसित व्यक्तित्व का लाभ उठाया जाना चाहिए परिजनों को उनकी उपस्थिति सौभाग्य मानना और अनुभव करना चाहिए, वहाँ होता ठीक उलटा है। इसके दो कारण हो सकते हैं—एक आहार-विहार में समय के साथ परिवर्तन न करना, दूसरा चिंतन को रचनात्मक दिशा में अग्रसर न किए रहना।

पेट की भूख कम हो जाती है, क्योंकि जवानी जैसी पुष्टई नहीं रहती। हजम करने की क्षमता घट जाती है। इसलिए भोजन में सुधार यह करना चाहिए कि उसे हलके स्तर का ही

रखें और मात्रा घटाकर इतनी कम कर दें, जो आसानी से हजम होती रहे। कड़े परिश्रम न बन पड़ें, तो दूर तक टहलने जाना बिस्तर पर पड़े-पड़े अंग-संचालन की विधियाँ नियमित रूप से करते रहना भी आवश्यक है। इससे अंगों में जकड़न बढ़ने न पाएगी। अपने हाथों अपने अंगों की मालिश की जा सकती है। जिनके पास सुविधा है, साथियों या नौकरों से वह कार्य करा सकते हैं। गहरी साँस लेने का अभ्यास प्राणायाम और ध्यान आदि करना चाहिए। अपनी सुविधा और स्वच्छता के लिए दूसरों पर कम-से-कम आश्रित रहने तथा स्वयं की व्यवस्था अपने बलबूते ही बनानी चाहिए। कपड़े धोने, सुखाने, झाड़ लगाने, उपयोग के पात्र स्वयं साफ करने जैसे कार्यों में समय भी कटता है और दूसरों का एहसान भी कुछ तो घटता ही है।

ताकत की दवाएँ खोजने और जवानी वापस लाने के लिए हकीम, डॉक्टरों के पीछे लगना और पैसा बहाना व्यर्थ है। बहु विज्ञापित टॉनिकों में से एक भी ऐसा नहीं है, जो घोषित महत्त्वों को सही सिद्ध कर सके। विटामिनों की भरमार पेशाब के रास्ते निकल जाती है तथा गुरदों पर अनावश्यक भार डालती हैं।

**बुढ़ापे में सबसे कष्टदायक बात है, परिस्थिति के अनुरूप चिंतन में आवश्यक परिवर्तन न करना और दिनचर्या की अस्त-व्यस्तता पर ध्यान न देना।** विगत का पश्चात्ताप और आगत का भय मन में जमाए रहना सर्वथा व्यर्थ है, उससे कुछ काम नहीं बनता। समय अपना काम करता है, उसे टाला नहीं जा सकता। न जवानी लौट सकती है और न मरण से पीछा छूट सकता है। ऐसी दशा में उन्हें चिंतन पर हावी क्यों रहने दिया जाए?

इसके स्थान पर यह कहीं अच्छा है कि अपने सत्कर्मों और दूसरों द्वारा किए गए उपकारों का स्मरण करते हुए चित्त को प्रमुदित एवं पुलकित रखा जाए। घर-परिवार के संबंध में भी उनकी अच्छाइयाँ देखी और सराही जाएँ। **जो परामर्श देना हो, उसे हुक्म के रूप में नहीं, अनुरोध के रूप में नम्र शब्दों में कहा जाए, तो वह कहीं अधिक कारगर होगा और अवज्ञा किए जाने जैसा कटु अनुभव भी न होगा।**

सबसे बुरी बात है खाली समय बैठे रहना। इसमें अपनी और दूसरों की हानि-ही-हानि है। घर के कार्यों में हाथ बँटाना, बाजार से शाक-सब्जी जैसी हलकी-फुलकी वस्तुएँ खरीदकर लाना, बच्चों को खिलाना, उनमें से जो बड़े हो गए हों, उन्हें पढ़ाना तथा कहानियाँ सुनाना जैसा कार्य तो सहज ही चलता रहता है।

सार्वजनिक सेवाकार्यों के लिए यह सबसे उपयुक्त और सरल समय है। शिक्षा संवर्द्धन, अपने उपयोगी अनुभवों, जानकारियों का वितरण-प्रशिक्षण, पुस्तकालय संचालन जैसे कार्य इन दिनों सरलतापूर्वक किए जा सकते हैं। स्वास्थ्य-शिक्षा की कक्षाएँ चलाई जा सकती हैं। पौरोहित्य की जानकारी प्राप्त करके घरों में बच्चों के संस्कार, परिवार विचार-गोष्ठी के रूप में संपन्न किए जा सकते हैं।

मन की स्थिति वानप्रस्थों जैसी बना लेनी चाहिए और घर को एक निर्वाह-व्यवस्था मात्र समझकर उस पर शासन करने की आकांक्षा को तिलांजलि दे देनी चाहिए। जीवन का यह समय आत्म कल्याण के छूटे कार्यों को पूरा करने में लगाना चाहिए, घर-गृहस्थी के कार्यों में अभीष्ट मार्गदर्शन-सहयोग देते हुए लोक-मंगल हेतु अपनी प्रतिभा-क्षमता का सुनियोजन करना चाहिए। ❐

# बच्चों को अभिभावक दें सुसंस्कार



बच्चे अपने साथ अभिभावकों के लिए अनेक कर्त्तव्य एवं उत्तरदायित्व भी लेकर आते हैं, जिन्हें पालन करना अभिभावकों के लिए आवश्यक होता है। बच्चे की शरीर-रक्षा के लिए भोजन, वस्त्र, चिकित्सा आदि की समुचित व्यवस्था पूरी करने के साधन जुटाने होते हैं। इतना ध्यान आमतौर से अभिभावकों को रखना होता है और वे अपने ढंग से उसकी पूर्ति भी करते हैं। किंतु बात यहीं समाप्त नहीं होती, इससे भी आगे की जिम्मेदारी अभिभावकों की है। जिसके न समझने एवं न निभाने से बच्चे अनेक दोष-दुर्गुणों से घिर जाते हैं और परिवार एवं समाज के लिए दु:खदायी सिद्ध होते हैं, अतएव दुर्गुणों से बचाना और सुसंस्कारी बनाना अभिभावकों का कर्त्तव्य है।

बच्चा अपने साथ पूर्वसंचित संस्कार लेकर आता है, पर उसका विकसित होना या कुसंस्कारी होना बहुत कुछ परिस्थितियों पर निर्भर करता है। समुचित शिक्षण, मार्गदर्शन एवं वातावरण का प्रभाव निश्चित ही बच्चों को सुसंस्कारी बनाने में सहायक है। कुछ बिरले ही बच्चे ऐसे अपवादस्वरूप होते हैं, जो पारिवारिक परिस्थितियों से भिन्न प्रकार का व्यक्तित्व निर्माण कर सके हों। व्यवसाय, गरीबी और बीमारी में उतार-चढ़ाव तो आते रहते हैं, पर स्वभाव और संस्कार प्राय: आजीवन वैसे ही बने रहते हैं जैसे बचपन में उपलब्ध हुए थे। इसलिए यदि बच्चों को सुसंस्कारी बनाना हो, सद्गुणसंपन्न बनाना हो, तो उनके जन्म से पूर्व ऐसी तैयारी करनी चाहिए कि उन्हें सुसंस्कृत वातावरण मिले, जिसमें पलकर वे सभ्य एवं सद्गुणी बन सकें।

यह एक तथ्य है कि बच्चा गर्भ में आने के दिन से ही सीखना शुरू करता है और पाँच वर्ष का होने तक अपनी मनोभूमि का निर्माण तीन-चौथाई पूरा कर लेता है। प्रसिद्ध बाल मनोवैज्ञानिक डॉ० एरिक्सन के अनुसार भी बालक के मूल ढाँचे का अधिकांश भाग शुरू के पाँच वर्षों में तैयार हो जाता है। शेष जीवन में प्रधानतया उसका विकास होता है। इस अवधि में बच्चा बहुत संवेदनशील होता है। बड़े होने पर स्कूली पढ़ाई, कला-कौशल आदि की शिक्षा पाई जाती है। इन कार्यों के उपयुक्त मस्तिष्कीय विकास बड़ी उम्र में होता है, किंतु स्वभाव, संस्कार एवं चरित्र जिस आयु में सीखा जाता है, वह अवधि गर्भ में प्रवेश करने से लेकर पाँच वर्ष तक की है। इस अवधि में अचेतन मस्तिष्क बहुत संवेदनशील रहता है। निकटवर्ती वातावरण में जो कुछ सोचा या किया जाता है, उसका बहुत ही स्पष्ट चित्र अपनी अंत:भूमिका में उतारता जाता है। यों यह प्रक्रिया जीवनभर चलती है, किंतु इसका बहुत बड़ा अंश शैशवकाल में ही पूरा हो जाता है। अतएव अभिभावकों को अपने बच्चों को सुसंस्कारी, सद्गुणी बनाने के लिए वातावरण बनाने का पूरा ध्यान देना चाहिए, जिससे उन्हें सुसंस्कृत बनने का उपयुक्त आधार मिल सके।

यह भली भाँति जान लेना चाहिए कि व्यक्ति की सुख-शांति के लिए स्वास्थ्य, शिक्षा, आजीविका आदि की आवश्यकता तो है, किंतु इतने भर से काम नहीं चलता। यदि आदतें और अभिलाषाएँ घटिया किस्म की हैं तो व्यक्ति का दृष्टिकोण, स्वभाव एवं व्यवहार ओछे स्तर का होगा। परिणामस्वरूप वह खुद परेशान रहेगा और परिवारवालों को अपने व्यवहार से दुःखी और परेशान करेगा तथा सड़ी मछली की तरह पूरे समाजरूपी तालाब को गंदा करेगा।

यदि हम बच्चों के भविष्य को उज्ज्वल देखना चाहते हों, तो उचित यही है कि उनको सुसंस्कारी बनाने की तैयारी में जुट जाएँ। बच्चे पैदा करने से पहले पति-पत्नी को अपने दोष-दुर्गुणों का परिष्कार करना चाहिए। अपने जीवन को सादगी से पूर्ण तथा तपोमय बनाना चाहिए। प्राचीनकाल में महर्षि कर्दम तथा देवहूति ने अपने तपश्चर्यामय जीवन से अपने को पवित्र-परिष्कृत करके ही सांख्य दर्शनशास्त्र के प्रणेता महर्षि कपिल जैसा पुत्र पाया था। परमात्मा का अवतार कहे जाने वाले भगवान श्रीकृष्ण ने पुत्रप्राप्ति के पूर्व अपनी लीला सहधर्मिणी रुक्मिणी के साथ तपश्चर्यामय जीवन जिया था। जिससे वे महापराक्रमी प्रद्युम्न के पिता बने। आधुनिक काल में भी तपस्वी एवं अनुकरणीय जीवन जीने वाले दंपत्तियों क्षुदिराम-चंद्रामणि तथा रामचंद्र-श्यामा सुंदरी ने श्रीरामकृष्ण तथा शारदामणि जैसी विश्वविश्रुत महान संतानें पाईं।

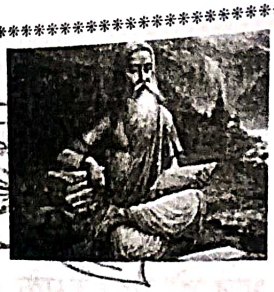
वस्तुतः माँ-बाप का जैसा व्यवहार, जैसा आचरण होगा, वैसे ही गुण बच्चों में आएँगे। बच्चों के भव्य सुरम्य निर्माण में पिता का बीज और माँ की भूमि, दोनों का समान महत्त्व है। अतएव जो मात्र मनुष्य आकृति के नहीं, वरन मानवीय प्रकृति के बच्चे चाहते हैं, उन्हें इस प्रयत्न में जुट जाना चाहिए और अपने अंतरंग तथा बहिरंग को प्रखर, परिष्कृत तथा सद्गुण संपन्न बनाना चाहिए।

गर्भावस्था में जननी के विचारों एवं भावनाओं का शिशु पर प्रभाव पड़ना निश्चित है। शकुंतला के संस्कारों ने भरत को महावीर बनाया। मदालसा अपने दिव्य संस्कारों के कारण ही तीन ब्रह्मज्ञानी पुत्रों की माँ बनी। भुवनेश्वरी दत्त ने अपने ज्ञान-वैराग्य तथा उत्कट साधना-उपासना के कारण ही विश्व वरेण्य स्वामी विवेकानंद जैसी संतान पाई। इसके विपरीत कलुषित विचारों वाली धुंधुली क्रूरकर्मी धुंधुकारी की माँ बनी। अतएव गर्भवती जननी यदि प्रसन्नता, उल्लास, सद्भावना, आदर्शवादिता एवं उत्कृष्टता आदि सद्गुणों से युक्त होगी तो इन गुणों का प्रभाव बालक पर पड़ना सुनिश्चित है।

बच्चे के पैदा होने के बाद माता-पिता की, समस्त परिवार की परिस्थितियाँ ऐसी हों, जिसमें अस्वच्छता, मनोमालिन्य आदि की गुंजाइश न हो। घर के सभी लोग ध्यान रखें कि बड़े ही कुशल संवेदनशील गुप्तचर की तरह बच्चा हमारे आचरण एवं व्यवहार से बहुत कुछ सीख रहा है। इन दिनों उसे जो कुछ सिखाया जाएगा, उसी के आधार पर उसकी प्रकृति बनेगी और बड़े होने पर उसका भविष्य निर्मित होगा। इस तथ्य को जानकर अभिभावकों का कर्त्तव्य हो जाता है कि अपने आचरण-व्यवहार को अनुकरणीय रखें। ❐

कथा–संवाद

# योगी की संपदा है–वैराग्य



गोविंद ने प्रातःकाल रथारूढ़ भगवान सूर्य को प्रणाम किया। भगवान सूर्य अपनी रश्मियों से धरा को आलोकित कर रहे थे। धरती पर उगी घास के ऊपर ओस की बूँदें मोतियों के समान चमक रही थीं। शीतल, मंद पवन से गोविंद का मन-हृदय आनंद से भर उठा था। गायत्री के सिद्धसाधक एवं कुलीन ब्राह्मण गोविंद अपने सदाचरण के लिए मालवेश्वर भोज के राज्य में प्रसिद्ध थे। गोविंद जितने विद्वान एवं मनीषी थे, उतने ही संवेदनशील भी थे। सूर्य की रश्मियों के समान उनका ज्ञान प्रखर था और हृदय ऐसा कोमल था, जो तुरंत किसी की भी पीड़ा के प्रति पिघलने लगता था। वे न तो असत्य वचन बोलते थे और न ही ऐसा आचरण करते थे।

मन, वचन और कर्म से वे सदा माता गायत्री के प्रति समर्पित थे। एक दिन गोविंद पूर्व दिशा की ओर बैठकर गायत्री महामंत्र का जप कर रहे थे, जिसके प्रभाव से उनका मुखमंडल दिव्य आभा से दमक रहा था। उस दिन उनकी तपस्या का कुछ ऐसा विशेष प्रभाव हुआ कि स्वयं देवराज इंद्र को वहाँ प्रकट होने के लिए विवश होना पड़ा। इंद्र के मन में गोविंद की तपस्या से निकली ऊर्जा के प्रति कुशंका थी कि कहीं इससे उनका देवराज का पद असुरक्षित न हो जाए।

उनके मन की बात जानकर गोविंद ने इंद्र से कहा—"हे देवराज! आपको इंद्रासन की चिंता है, पर आप निश्चिंत हो जाएँ; क्योंकि हम तो केवल माँ गायत्री का चिंतन करते हैं, हमें न तो किसी पद की चाह है और न किसी वस्तु की लालसा। एक तपस्वी के लिए त्रिलोक का वैभव भी तिनके के समान होता है, फिर उसके सामने आपके इंद्रासन का भला क्या मूल्य होगा? सृष्टि उसके लिए एक बुलबुले के समान है, जिसका कोई अस्तित्व नहीं। इस नश्वर एवं क्षणिक संसार में ऐसा कुछ भी नहीं, जो एक सच्चे तपस्वी एवं योगी को डिगा दे।"

गोविंद ने आगे कहा—"एक तपस्वी का तप केवल सृष्टि के कल्याण एवं मानवता की पीड़ा-निवारण के लिए होता है और एक योगी की एकमात्र संपदा प्रखर विवेक एवं उत्कृष्ट वैराग्य में सन्निहित होती है। आप तो केवल तप से इसलिए घबराते रहते हैं कि कहीं कोई आपका इंद्रासन छीन न ले। आप तो सुख को भी सही ढंग से भोग नहीं पा रहे हैं। आप निश्चिंत रहें और हमें अपनी माता की भक्ति में डूबने दें। प्रस्थान करें!"

बिना कुछ कहे इंद्र तो वहाँ से चले गए, परंतु तत्क्षण एक और परिदृश्य वहाँ प्रकट हुआ। राजा मालवेश्वर भोज अपने रथ से उद्यान की ओर जा रहे थे। वे किसी सोच में डूबे सूर्य की सुनहली रश्मियों को निहार रहे थे। तभी योगी एवं तपस्वी गोविंद को देखकर उन्होंने अपने रथ को रोकने का आदेश दिया और फिर रथ से उतरकर उन्होंने उनका अभिवादन किया। गोविंद ने राजा के अभिवादन का उत्तर न देते

हुए अपनी दोनों आँखें मूँद लीं। गोविंद की प्रतिक्रिया से विस्मित राजा ने कहा—"हे महातपस्वी! आपने हमें आशीर्वाद देना तो दूर, अपनी आँखें ही बंद कर लीं। हमसे ऐसी क्या भूल हो गई। इसके पीछे कोई कारण अवश्य होगा, जो हमें ज्ञात नहीं हो पा रहा है। कृपया इसे स्पष्ट करने की कृपा करें।"

गोविंद ने कहा—"महाराज! यदि आप सत्य सुनना चाहते हैं तो मैं सत्य वचन कहता हूँ, पर ध्यान रखें, सत्य को सह पाना अत्यंत कठिन है। राजन्! मैं खरी-खरी बात कहने में विश्वास रखता हूँ।" महाराज भोज ने कहा—"आप सत्य ही कहें, मैं सत्य सुनने को उत्सुक हूँ। राजदरबार में हमें प्रसन्न करने के लिए गाये गए अतिशयोक्तिपूर्ण गान से हमें वितृष्णा-सी हो गई है। आप सत्य कहकर हमें उपकृत ही करेंगे। हमें स्वीकार है। आप कहें!"

गोविंद ने कहा—"राजन्! लोकोक्ति है कि प्रातः किसी कृपण का मुख देखकर नेत्र बंद कर लेना चाहिए। और इसी कारण मैंने अपनी आँखें मूँद ली हैं।" राजा ने इसे सुना तो उन्हें ऐसा लगा, मानो उनके ऊपर तुषाराघात हो गया हो। राजा के माथे पर पसीने की बूँदें दीखने लगीं। अपनी गलती सुनना भी अत्यंत साहस का काम है। किसी तरह राजा ने अपने को संयत किया और बिखरे धैर्य को बटोरने लगे। गोविंद राजा की मनःस्थिति में हो रहे परिवर्तन को भलीभाँति अनुभव कर रहे थे।

राजा भोज ने कहा—"हे तपस्वी! क्या हम कृपण हैं। हमने कइयों को दान दिया है, फिर कैसे कृपण हुए।" गोविंद ने कहा—"महाराज! आपने जो दान दिया है, वह अपने अहंकार की तुष्टि के लिए दिया है; जबकि दान किसी सत्पात्र को उदारता के साथ प्रदान किया जाता है। केवल चाटुकारों को आपने दान दिया है; सत्पात्रों को नहीं। आप राजा हैं, राजा प्रजा के लिए भगवान जैसा होता है। जो राजा अपने इस धर्म का पालन नहीं करता है, उसकी दुर्गति सुनिश्चित है; जो राजकोष का उपयोग केवल अपने सुख-भोग, वासना-तृष्णा की पूर्ति के लिए करता है, एक दिन उसका पतन सुनिश्चित है, फिर चाहे वह कितना ही धनबल, जनबल एवं बाहुबल से संपन्न क्यों न हो! अतः ऐसे राजा का मुख नहीं देखना चाहिए और इसीलिए हमने अपनी आँखें मूँद ली हैं।"

गोविंद बोल रहे थे और राजा भोज का हृदय सत्य के इन बाणों से बिंधता जा रहा था। गोविंद आगे बोले—"महाराज! प्रगल्भ की विद्या, कृपण का धन और कायर का बाहुबल—ये तीनों पृथ्वी पर व्यर्थ हैं। पृथ्वी पर सद्गुण देह छूटने के बाद भी अमर रहता है। धन तो चंचल है। इसका तो विनिमय होना ही है, परंतु उसका सदुपयोग सर्वोच्च है। धन तो माध्यम है, उदारता तो हृदय का गुण है। यदि उदारता है तो दधीचि, शिवि और कर्ण के समान दानवीर हुआ जा सकता है, जिनकी अमरगाथा अभी भी इस धरा पर गाई जाती है।"

राजा भोज को मिले विचार भगवान भास्कर की रश्मियों के संग एकाकार होकर उनके जीवन को एक नई दिशा दे गए। आज का सूर्योदय उनके जीवन में भाग्योदय के रूप में परिवर्तित हो गया था। इसके उपरांत राजा भोज ने अपने धन का अधिकतम उपयोग प्रजा के हित में किया। औरों के लिए उदात्त उदारता एवं स्वयं के लिए अतिशय कठोरता का व्रत अपनाकर उन्होंने अपने जीवन को धन्य कर लिया। ❐

# गायत्री मंत्र ही सर्वश्रेष्ठ क्यों ?




गायत्री–उपासना का भावनात्मक और वैज्ञानिक, दोनों ही दृष्टियों से बड़ा महत्त्व है। भावना की दृष्टि से विचार किया जाए तो मानव जीवन के चरित्र उत्कर्ष का बीजमंत्र इसे कहा जा सकता है। सामान्यतया मनुष्य सबसे अधिक उपेक्षा सद्बुद्धि की ही करता है। जिस औजार से उसे निर्माणकार्य करना है, उसे ही टूटा–फूटा, भौंथरा और अनगढ़ रखता है, इस भूल के फलस्वरूप ही उसे जीवनलक्ष्य से वंचित रहना पड़ता है।

सृष्टि के समस्त प्राणियों की तुलना में सबसे श्रेष्ठ साधनसंपन्न शरीर मनुष्य को ही मिला है। बोलने, सोचने, लिखने, करने, मिल–जुलकर रहने और खोजने की जो विशेषताएँ मनुष्य को प्राप्त हैं, उन्हीं के बलबूते पर उसने उन्नति के उच्च शिखर तक पहुँचने में सफलता पाई है।

जितनी सुविधाएँ मनुष्य को प्राप्त हैं, उसका हजारवाँ भाग भी सृष्टि के अन्य प्राणियों को प्राप्त रहा होता तो वे अपने को धन्य मानते। आश्चर्य इस बात का है कि इतनी सुविधाएँ रहते हुए भी लोग दुःखी क्यों हैं ? निरंतर चिंतित, खिन्न, उदास, क्षुब्ध और अशांत क्यों हैं ? इसका एक ही कारण है कि उनकी विचारणा का, प्रज्ञा का, सद्बुद्धि का परिष्कार नहीं हुआ। यदि वे सोचने का तरीका सही बना लेते तो आज जो अगणित समस्याएँ और कठिनाइयाँ सामने उपस्थिति हैं, उनमें से एक भी दृष्टिगोचर न होती। सोचने का सही तरीका यदि सीख लिया जाए तो फिर इसी जीवन में स्वर्ग की अनुभूतियाँ बिखरी हुई दिखाई पड़ने लगें। निस्संदेह विचारणा की अशुद्ध प्रणाली ने ही स्वर्गीय सुविधाओं से संपन्न मानव प्राणी को नारकीय परिस्थितियों में, दुःख–दारिद्रय में पड़े रहने के लिए विवश किया है। यदि सुख–शांति की स्थिति सचमुच अभीष्ट हो तो उसके लिए एक उपाय अनिवार्यतः करना पड़ेगा और वह उपाय है— अपनी विचारपद्धति का संशोधन।

गायत्री महामंत्र में इसी मर्म, रहस्य का उद्घाटन किया गया है। मानव जाति को संदेश दिया गया है कि कोल्हू के बैल बने फिरने, मृगतृष्णा में भटकते रहने की अपेक्षा मूल लक्ष्य को समझो। सुखप्राप्ति के लिए प्रयत्न तो करो, पर प्रयत्नों से पूर्व स्थिति को भी समझ लो कि वह कहाँ से और कैसे मिलेगी ?

गायत्री मंत्र बताता है कि विचार–संशोधन, भावनात्मक परिष्कार वह आवश्यक तत्त्व हैं, जिन्हें प्राप्त किए बिना न किसी को आज तक सुख–शांति मिली है और न आगे मिलेगी।

वस्तुएँ क्षणिक सुख दे सकती हैं। वासना और तृष्णा की मदिरा में कुछ ही क्षण उन्मत्त रहा जा सकता है। उसकी परिणति तो दूनी अशांति, दूनी हानि और असफलता में ही होती है। इसलिए हमें मानसिक संस्थान को शुद्ध करने का सबसे अधिक प्रयत्न करना चाहिए।

अपनी एक-एक प्रवृत्ति का सूक्ष्म निरीक्षण करना चाहिए और उन पर चढ़े हुए कुसंस्कारों का साहसपूर्वक परिष्कार करना चाहिए। वस्तुतः इसी का नाम साधना है। साधना का केंद्रबिंदु इसी प्रयास एवं पुरुषार्थ को कहा जाता है।

गायत्री मंत्र में ईश्वर से यही माँगा गया है कि प्रभु हमें आपने मानवशरीर देकर असीम अनुकंपा की है; अब मानवबुद्धि देकर हमें उपकृत और कर दीजिए, ताकि हम सच्चे अर्थों में मनुष्य कहला सकें और मानव जीवन में आनंद का लाभ उठा सकें। गायत्री के 24 अक्षरों में परमात्मा के 'सवितुः' 'वरेण्यं' 'भर्ग' आदि देव गुणों का चिंतन करते हुए उन्हें अपने जीवन में धारण करने की आस्था बनाते हुए यह संकल्प किया गया है कि परमात्मा के अनुग्रह एवं वरदान की एकमात्र विभूति, सद्बुद्धि को भी हम प्राप्त करते रहेंगे। अपने जीवन को उसी साँचे में ढालेंगे, जिसमें कि सद्बुद्धिसंपन्न महामानव ढालते चले आए हैं। उसी संकल्प को बार-बार पूरी निष्ठा और भावनापूर्वक दोहराने का नाम गायत्री जप है। जप का सच्चा स्वरूप समझते हुए जो उस उपासना को करते हैं, वे उसका अनिर्वचनीय लाभ प्राप्त भी कर लेते हैं। वे इस अमृत को पाकर अमर बन जाते हैं और इस मृत्युलोक में रहते हुए भी दिव्य लोक में निवास करने का स्वर्गीय आनंद पग-पग पर अनुभव करने लगते हैं।

वैज्ञानिक दृष्टि से गायत्री-उपासना के अगणित भौतिक लाभ भी हैं। कष्टों और अपत्तियों में पड़े हुए, विपत्तियों में फँसे हुए, अभाव और दरिद्रता से पीड़ित, असफलता की ठोकरों से विक्षुब्ध व्यक्ति यदि इस महामंत्र का आश्रय लेते हैं तो उन्हें आशा की किरणें दृष्टिगोचर होती हैं। जिन्हें अपना भविष्य अंधकारमय दीख रहा था और आपत्तियों के कुचक्र में पीसे जाने का भय सता रहा था, उन्हें इस उपासना से नया प्रकाश मिला है। अभावग्रस्त व्यक्ति दारिद्रय से और रुग्ण मनुष्य पीड़ाओं से छुटकारा प्राप्त करते देखे गए हैं।

अनेक व्यक्तियों को गायत्री-उपासना के फलस्वरूप अनेक प्रकार के कष्टों से छुटकारा पाते और अनेक सुविधाएँ उपलब्ध करते हुए देखकर हमें यही अनुमान लगाना चाहिए कि इस साधनपद्धति में ऐसे वैज्ञानिक तथ्यों का समावेश है, जिनके कारण साधक की अंतर्भूमि में आवश्यक हेर-फेर उपस्थित होते हैं और वह असफलताओं एवं शोक-संतापों पर विजय प्राप्त करते हुए तेजी से समुन्नत, समर्थ एवं सफल जीवन की ओर अग्रसर होता है। इसीलिए गायत्री-उपासना सर्वश्रेष्ठ है।

गायत्री का माहात्म्य भावनात्मक दृष्टि से भी है और वैज्ञानिक दृष्टि से भी। इसी से उस महान अध्यात्म संबल को श्रद्धापूर्वक अपनाए रहने और उसे नित्य कृत्यों में स्थान दिए रहने का शास्त्रकार ने निर्देश दिया है। ऋषियों ने प्रत्येक विवेकशील व्यक्ति के लिए गायत्री की निष्ठापूर्वक उपासना करने के लिए जोर दिया है और जो उस उपयोगी व्यवस्था का लाभ नहीं उठाना चाहते, उनकी भूल को उन्होंने कटु भर्त्सना के साथ निंदनीय भी ठहराया है। गायत्री-उपासना मानव मात्र के लिए कल्याणकारी है। इस युग में परमपूज्य गुरुदेव पं. श्रीराम शर्मा आचार्य जी ने इसे सर्वसुलभ बना दिया है। जिसका लाभ हर किसी को उठाना चाहिए। ❐

# ग्रीष्मावकाश में बाल संस्कारशाला



जीवन बहुआयामी है। इसका समग्र विकास हो, तभी इसमें उस सौरभ और गौरव के दर्शन होते हैं, जो स्वयं एवं सारे परिकर को सुरभित कर देता है। दुर्भाग्य है कि वर्तमान की जीवनशैली इसके अनेकानेक आयामों को विकसित होने का अवसर ही नहीं देती।

आज संयुक्त परिवार नहीं है, पति-पत्नी दोनों को धनोपार्जन के लिए घर से बाहर रहना होता है। ऐसे में बच्चों को शिक्षा कम उम्र में ही आरंभ कर दी जाती है। बचपन दादा-दादी, नाना-नानी की गोद और लोरियों के बजाय पालनाघरों में बीतने लगा है। होश सँभालते बच्चे होस्टलों में पहुँचा दिए जाते हैं।

ऐसा नहीं है कि यह स्थिति परिस्थितियों की विवशता से जुड़ी हो। अब तो यह प्रचलन ही हो गया है। बचपन किताबों में खो-सा गया है। उन्मुक्त आकाश, सागर और नदियों का किनारा, सुरभित प्रकृति अब बच्चों को आकर्षित नहीं करती। कंप्यूटर और इंटरनेट ही उनकी दुनिया बनकर रह गई है। प्रतिस्पर्द्धाओं का दौर ऐसा चला है कि ट्यूशन से साँस लेने की फुरसत भी नहीं मिल रही है।

रवींद्रनाथ टैगोर, डॉ० अब्दुल कलाम जैसे अनेकानेक महापुरुष उन्मुक्त आकाश की गोद में पाठशालाओं की स्थापना के पक्षधर हैं। हमारी सनातन संस्कृति भी यही रही है। तब गुरुकुल हुआ करते थे, जहाँ पुस्तकीय शिक्षा ही नहीं, विनय, सेवा, प्रेम, सहकार, संयम, श्रमशीलता, पुरुषार्थ जैसे सद्गुणों का अभ्यास भी कराया जाता था। जीवन का आदर करना है तो शिक्षा को समग्र बनाना ही होगा। शिक्षा के कुछ और आयामों का अवलंबन भी करना होगा। अभिभावक और विद्यार्थी तो इस दिशा में ध्यान दें ही, लेकिन बच्चों पर सबसे बड़ा उपकार वे परमार्थपरायण व्यक्ति कर सकते हैं, जिनमें बच्चों को आदर्शोन्मुख बनाने की गहरी चाह है।

बाल संस्कारशालाएँ इस आकांक्षा को पूरा करने में बड़ी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकती हैं और निभा रही हैं। गायत्री परिवार द्वारा देशभर में चलाई जा रहीं बाल संस्कारशालाओं में आमतौर पर साप्ताहिक शिक्षण क्रम चलाया जाता है, लेकिन छुट्टियों का सदुपयोग करते हुए ग्रीष्मावकाश में हर क्षेत्र, गाँव, मुहल्ले में ऐसी बाल संस्कारशालाएँ आरंभ की जानी चाहिए। समय की माँग है कि संवेदनशील शिक्षक, वरिष्ठ विद्यार्थी, नेतृत्व क्षमता और प्रबंधन के धनी युवा इस दिशा में कदम बढ़ाएँ और इस अद्वितीय समाजसेवा में अपना योगदान दें।

बाल संस्कारशालाओं का मुख्य लक्ष्य विद्यार्थी को व्यावहारिक ज्ञान प्रदान करने के साथ उसे जीवन के अनेकानेक आयामों का बोध कराना होना चाहिए। बच्चों की मौलिक प्रतिभा को निखारना, अपने से बड़ों के प्रति आदर का भाव विकसित करना, छोटों से प्रेम करना सिखाना, जीवनशैली को आदर्शोन्मुख

करना, प्रकृति से सीखना, सीखे गए ज्ञान की उपयोगिता अनुभव करना और उसे रचनात्मक दिशा में नियोजित करना, सामाजिक जिम्मेदारियों के प्रति उत्तरदायी बनाना, राष्ट्रप्रेम जगाना, साहसी और संकल्पनिष्ठ बनाना आदि बाल संस्कारशाला संचालकों का ध्येय होना चाहिए।

बाल संस्कारशालाओं का पाठ्यक्रम कुछ ऐसा बनाया जाए, जो छुट्टियों में मनोरंजन की एवं बच्चों की आकांक्षा को पूरा करने वाला भी हो। पुस्तकों से अलग हटकर भी ज्ञानार्जन के अनेकानेक उपाय हैं, जिनका अवलंबन बच्चों को बड़ा रोचक प्रतीत हो सकता है।

**गरमी की छुट्टियों में कुछ ऐसा करें**

● बच्चों को आदर्श दिनचर्या का अभ्यास कराया जाए और उसकी उपयोगिता व लाभ बताए जाएँ। इस दिनचर्या में खेल-कूद, अभ्यास, देवदर्शन, समाजसेवा, स्वाध्याय जैसे महत्त्वपूर्ण क्रम जुड़े हों।

● प्रकृति से सीखने की कला विकसित की जाए। खेत, परंपरागत व्यवसाय—कुम्हार, लुहार, सुनार आदि उद्यमों का निरीक्षण कराया जाए। संभव हो तो उसमें बच्चों को हलका-फुलका हाथ लगाने का अवसर भी प्रदान किया जाए।

● रोजमर्रा की आवश्यकताओं को पूरा करने का व्यावहारिक ज्ञान सिखाया जाए। बच्चों के दल को बैंक, पोस्ट ऑफिस, पंचायत, कलेक्टरेट, बीमा योजना, अग्निशमन, आपदा प्रबंधन, रेलवे स्टेशन, पुलिस, रोड सेफ्टी आदि स्थानों पर ले जाकर दिखाया जाए। निर्धारित फार्म कैसे भरे जाते हैं, इसका अभ्यास कराया जाए। यदि ऐसे विशेषज्ञों से संपर्क है, तो उन्हें अपनी बाल संस्कारशाला में बुलाकर बच्चों को जानकारियाँ दिलाई जाएँ।

● विभिन्न प्रकार के औद्योगिक संस्थानों —कपड़ा मिल, ऑटोमोबाइल, समाचारपत्र प्रेस आदि का निरीक्षण कराया जाए।

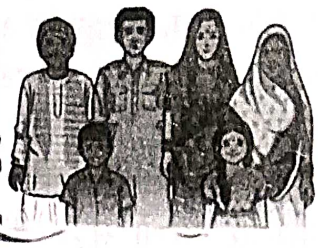
● बच्चों के समूह को सामाजिक कुरीतियों का बोध कराया जाए इनके उन्मूलन के लिए बाल टोलियों के माध्यम से जनजागरण अभियान चलाए जाएँ। वृक्षारोपण, घरों के आस-पास सफाई, मंदिरों में सेवा जैसे क्रम अपनाए जा सकते हैं।

● बच्चों में रचनात्मकता के विकास के लिए सिलाई, क्राफ्ट, पेंटिंग, बची-खुची वस्तुओं से सजावट इत्यादि के सामान बनाने तथा सिखाने के क्रम अपनाए जा सकते हैं।

● प्राकृतिक स्थलों पर जाकर वहाँ से मिलने वाली शिक्षाओं का बोध कराया जाए। ❐

**संत चिदंबर उन दिनों सिद्धपुरुष माने जाते थे। एक दिन एक स्त्री संतान प्राप्त होने का आशीर्वाद माँगने आई। संत ने उसे भुने चने दे दिए और पेट भर लेने को कहा। स्त्री चने खाती रही। कई छोटे बच्चे चने पाने के लिए स्त्री को देखते रहे, पर उसने, किसी को दिए नहीं। विदाई का प्रणाम करने वह स्त्री पहुँची तो संत ने कहा— "देवी! जब तू बच्चों को तनिक-से चने तक देने की उदारता न दिखा सकी तो भगवान तुझे बेशकीमती बच्चा मुफ्त में कैसे देगा ?" भगवान भी उदार व्यक्तियों को ही आशीर्वाद देते हैं।**

# मानवीय संस्कृति और परिवार



संस्कृति के विकास का आरंभ परिवार संस्था के साथ जोड़ा जा सकता है। पौराणिक और आध्यात्मिक दृष्टि से इसके उद्‌भव की जो भी गाथाएँ या कारण हैं, समाजशास्त्रीय दृष्टि से मनुष्य के भीतर जन्मे सहयोग और अनुराग के भाव को परिवार का आधार कहा जाता है। सहयोग-सद्‌भाव का जन्म न होता तो न स्त्री-पुरुष साथ रहते, न संतानों का जिम्मेदारी से पालन होता और न ही इस तरह बने कुटुंब के निर्वाह के लिए विशिष्ट उद्यम करते बनता। बच्चों को जन्म और प्राणी भी देते हैं। एक अवस्था तक वे साथ रहते हैं और अपना आहार खुद लेने लायक स्थिति में पहुँचने पर अपने आप अलग हो जाते हैं, उन्हें जन्म देने वाले युगल को भी उनकी कोई चिंता नहीं रहती। मनुष्य ने साथ रहना शुरू किया और इस कारण दायित्व बढ़े तो उन्हें पूरा करने के लिए नए साधनों की खोज भी करनी पड़ी। इस खोज में ही विज्ञान, शिक्षा, प्रौद्योगिकी, संस्कार, समूह, ग्राम, नगर, राज्य, समाज, देश आदि आयाम प्रकट होने लगे। मनुष्य अपनी यात्रा पर तेजी से बढ़ने लगा और कुछ ही समय में वह अपने आप को सृष्टि का सर्वश्रेष्ठ प्राणी कहने की स्थिति में पहुँच गया।

विकास की इस यात्रा के पीछे कहीं-न-कहीं परिवार संस्था ही विद्यमान है। यदि यह संस्था नहीं होती तो सीधे प्रकृति से आहार लेने और अपने शरीर का रक्षण करने के सिवाय कुछ भी करने की आवश्यकता नहीं थी। मनुष्य सभ्यता का इतिहास परिवार बसाने और उसकी आवश्यकता पूरी करने, उसके सदस्यों के विकास की चिंता करने के बिंदु से आरंभ होता है। एकदूसरे के लिए त्याग, बलिदान, उदारता, सहिष्णुता, सेवा और उपकार जैसे मानवीय आध्यात्मिक मूल्यों की प्रयोगशाला भी परिवार का परिकर ही है।

समाजशास्त्री मानते हैं कि समाज, देश और विश्वमानवता जैसी धारणाएँ भी परिवार का ही विकसित रूप हैं। पति-पत्नी और उनकी संतान से बनी इकाई में जब संतानों के पत्नी-बच्चे भी आ जुड़े तो संयुक्त परिवार का उदय हुआ। संयुक्त परिवारों के समूह ने बस्ती, ग्राम और नगर के रूप में विकास किया। विराट रूप लेते गए इस स्वरूप के साथ सामूहिकता, व्यापक हितों की भावना और उनके लिए मर-मिटने का उत्सर्ग अथवा पूरा जीवन खपा देने वाला समर्पण भाव जन्मा। उनकी व्यवस्था के लिए विधि-विधान बने, नियम रचे गए, संस्थान बने, नागिरक और प्रशासनिक संगठनों का ढाँचा तैयार हुआ। विज्ञान के सहयोग से उत्पादन, संरक्षण और विकास के विभिन्न आयाम खुले। इस सारणी को आगे बढ़ाते जाएँ तो सभ्यता-संस्कृति के विकास की हर कड़ी परिवार संस्था के आरंभ से जुड़ती चली जाती है।

अध्यात्मविद् मानते हैं कि मनुष्य की चेतना अभी कुटुंब-परिवार की सीमा लाँघकर आगे नहीं बढ़ी है। नगर, ग्राम, देश, समाज उसके अगले विस्तार जरूर हैं, लेकिन मानवीय चेतना ने उसमें अभी रंग नहीं भरा है। अपने आप को उससे पूरी तरह नहीं जोड़ा है। देश, समाज

उसकी विकासयात्रा के अगले पड़ाव हैं, लेकिन वे बहुत दूर हैं। उन्हें लक्ष्य कहा जा सकता है, खाका बताया जा सकता है, रूपरेखा समझा जा सकता है, जिन्हें अभी ठोस आकार लेना है। परिवार संस्था सुदृढ़ होने के स्थान पर अब जर्जर होने लगी। अब उसके टूटने के लक्षण दिखाई देने लगे हैं। समाजशास्त्री कहते हैं कि परिवार के सदस्य एकदूसरे के प्रति सेवा और उत्सर्ग का भाव रखने के स्थान पर स्वार्थी संकीर्ण होने लगे हैं। अपने सुख और भोग के लिए अत्यंत आत्मीय स्वजन की बलि चढ़ाने में अब हिचक भी मिटती जा रही है।

परिवार के विकास का एक प्रयोग इस सदी के आरंभ में 'कम्यून लार्जर फैमिली' के रूप में किया गया था। आठवाँ दशक पूरा होने तक साम्यवादी व्यवस्था दम तोड़ने लगी। उसके साथ 'कम्यून' और 'सहकारी जीवन' के प्रयोग भी लड़खड़ा गए। परिवार संस्था का आधार खिसकने के मुख्य कारण और भी हैं।

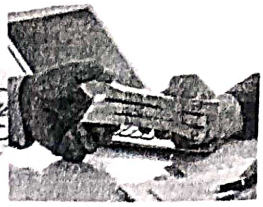
संकट का स्वरूप कुछ इस तरह भी समझ सकते हैं। इस शताब्दी का उत्तरार्द्ध शुरू होने तक भारत में संयुक्त परिवारों का प्रचलन लोकप्रिय था। माता-पिता अपने बच्चों और उनकी संतानों के साथ मजे से रहते थे। तीन और उससे ज्यादा पीढ़ियाँ भी एक ही परिसर में रहतीं, एक ही चौके में बना भोजन करतीं और सुख-दुःख को हार्दिक स्वीकृति से निभाती चलती थीं। छठे-सातवें दशक में संयुक्त परिवार बिखरने लगे। ये अपवाद पहले भी थे, जिनमें पति-पत्नी और उनके बच्चे माँ-बाप से अलग बस जाते थे, लेकिन उनका अनुपात बीस-पच्चीस प्रतिशत ही था। गाँव, समाज और रिश्तेदारी में उन्हें निंदित भाव से देखा जाता था। सातवें दशक में संयुक्त परिवार की टूट को सहज भाव से देखा जाने लगा, क्योंकि वह यत्र-तत्र बहुतायत में घटने लगी थी।

टूट का कारण रोजगार के अवसर और स्वरूपों में बदलाव के साथ सुविधा-साधनों के प्रति बढ़ती हुई ललक बताई गई। कहा गया है कि अलग रहते हुए अधिक समृद्ध और संपन्न जीवन जिया जा सकता है तो उसकी अपेक्षा क्यों नहीं करनी चाहिए। प्रेम, प्रतीति और आत्मीयता अलग रहते हुए भी निभाई जा सकती है। संयुक्त परिवार अब भी कहीं-कहीं मौजूद हैं। वे व्यवसायगत विवशताओं के कारण हैं, जैसे कहीं सम्मिलित खेती है या साझा व्यवसाय है अथवा अनबँटी पैतृक संपत्ति है। जले हुए कपड़े के भस्मीभूत धागों की तरह वे दिखाई भले ही एक देते हों, वस्तुस्थिति वैसी है नहीं। हवा का एक हलका-सा झोंका भी उन्हें बिखरा देने के लिए पर्याप्त है। हमें आज मानवीय स्तर पर चिंतन कर हमारी परिवार संस्कृति की रक्षा एक सामाजिक दायित्व मानकर करनी होगी। ❐

**कुछ लोगों ने देखा कि विनोबा भावे प्रतिदिन अपने पवनार आश्रम से लगभग तीन मील दूर स्थित सुरगाँव एक फावड़ा कंधे पर रखकर जाते थे। एक बार कमलनयन बजाज ने उनसे पूछा कि आप फावड़ा रोज इतनी दूर अपने साथ क्यों ले जाते हैं। उस गाँव में ही किसी के यहाँ आप फावड़ा क्यों नहीं छोड़ आते ?**

**विनोबा जी बोले—"जिस काम के लिए मैं जाता हूँ, उसका औजार भी मेरे साथ ही होना चाहिए। फौज का सिपाही अपनी बंदूक या अन्य हथियार लेकर चलता है, उसी प्रकार एक मिस्त्री को भी अपने औजार सदा अपने साथ लेकर ही चलना चाहिए।"**

# गायत्री तपोभूमि के बैंक खातों का विवरण



1. धर्मार्थ दान गायत्री मंदिर :
   - ० दैनिक व्यवस्था, संस्कार
   - ० अखण्ड दीप, पर्व-त्योहार
   - ० अनुष्ठान, विभिन्न प्रकार के शिविर
   - ० अन्नक्षेत्र ( भोजन-व्यवस्था )
   - ० गायत्री मंदिर जीर्णोद्धार एवं पुनर्निर्माण

PAN-AAATG0704D
**Bank A/C**-Gayatri Mandir Trust,
★**IOB Branch :** Yug Nirman Tapobhoomi, Mathura
**IFSCODE**-IOBA-0001441,
**A/C No.**-144102000000003,
★**PNB Branch :** Jawahar Inter College, Govind Nagar, Mathura, **IFSCODE** - PUNB0497600
**A/C No.** - 4976005700000080
★**SBI Branch :** Vrindavan Gate, Mandi Ram Das, Mathura, **IFSCODE** - SBIN0002503
**A/C No.** - 42593590624
★**YES Bank Branch :** Dampier Nagar, Mathura
**IFSCODE** - YESB0000072
**A/C No.** - 007288700000890

---

3. गोशाला दान, प्राकृतिक चिकित्सा

PAN-AAATY2059 F
**Bank A/C**-Yug Nirman Yojana Vistar Trust,
★**IOB Branch :** Yug Nirman Tapobhoomi, Mathura
**IFSCODE**-IOBA-0001441,
**A/C No.**-144102000002051,
**Bank A/C**-Yug Nirman Yojana Vistar Trust (02)
★**PNB Branch :** Jawahar Inter College, Govind Nagar, Mathura, **IFSCODE**-PUNB0497600
**A/C No.** - 4976005700000062

2. पुण्यार्थ दान :
   - ० युग निर्माण विद्यालय, सप्त क्रांति आंदोलन
   - ० पूज्य गुरुदेव की साधनास्थली अखण्ड ज्योति संस्थान पर स्मारक निर्माण
   - ० पं० श्रीराम शर्मा आचार्य पारमार्थिक चिकित्सालय में नि:शुल्क चिकित्सा शिविर, अन्नक्षेत्र ( भोजन-व्यवस्था )
   - ० आपदा निवारण, चिकित्सा सुविधा एवं अन्य पारमार्थिक प्रयोजनों के लिए ( दान की राशि पर आयकर अधिनियम की धारा 80G के अंतर्गत छूट प्राप्त है। ) परिजनों को PAN भेजना अनिवार्य है।

PAN-AAATY0086E
**Bank A/C**-Yug Nirman Yojana Trust,
★**IOB Branch :** Yug Nirman Tapobhoomi, Mathura
**IFSCODE**-IOBA-0001441,
**A/C No.**-144102000000002
★**PNB Branch :** Jawahar Inter College, Govind Nagar, Mathura, **IFSCODE**-PUNB0497600
**A/C No.**-4976005700000053,
★**SBI Branch :** Vrindavan Gate, Mathura
**IFSCODE**-SBIN0002503
**A/C No.**-00000042588707132

---

4. ० युग निर्माण योजना ( हिंदी ) मासिक,
   - ० युग शक्ति गायत्री ( गुजराती ) मासिक,
   - ० साहित्य, हवन सामग्री, प्रचार सामग्री,
   - ० पं. श्रीराम शर्मा आचार्य वाङ्मय

PAN-AAATY2059 F
**Bank A/C**-Yug Nirman Yojana Vistar Trust (Prachar Khata)
★**IOB Branch :** Yug Nirman Tapobhoomi, Mathura
**IFSCODE**-IOBA0001441,
**A/C No.**-144102000002021
**Bank A/C**-Yug Nirman Yojana Vistar Trust (01)
★**PNB Branch :** Jawahar Inter College, Govind Nagar, Mathura, **IFSCODE**-PUNB0497600
**A/C No.**-4976005700000071
**Bank A/C**-Yug Nirman Yojana Vistar Trust
★**SBI Branch :** Vrindavan Gate, Mandi Ram Das, Mathura, **IFSCODE** - SBIN0002503
**A/C No.** - 42597926175

**E-Mail ID : yugnirman@yugnirmanyojna.org**
**Website : www.yugnirmanyojna.org**

# परशुराम जयंती



युग ऋषि की विचार क्रांति का फैला नया उजाला।
परशुराम का फरसा चमका, बुद्धि बदलने वाला॥

ऋषियों का आदर्श साथ ले, विचार क्रांति है आई,
समाधान वैज्ञानिक पाकर, सारी दुनिया हर्षाई,
सत्साहित्य का है प्रतिपादन, तम को हरने वाला।
परशुराम का फरसा चमका, बुद्धि बदलने वाला॥

परशुराम की दिव्य चेतना, लेकर कलम चली है,
संवेदन छलकाने वाली, प्रज्ञा प्रखर मिली है,
हर भटके राही को मिलता, जिससे सतत उजाला।
परशुराम का फरसा चमका, बुद्धि बदलने वाला॥

परशुराम कह रहे सूक्ष्म से, जागें और जगाएँ,
युग साहित्य स्थापित करके, पढ़कर स्वयं पढ़ाएँ,
सभी समस्याओं का है अब, समाधान होने वाला।
परशुराम का फरसा चमका, बुद्धि बदलने वाला॥

सुरसरि सम सबका हित करती, गुरुवर की प्रियवाणी,
जिसने माना मिली उसी को, पावन गति कल्याणी,
प्रज्ञावतार बनकर है आया, जग को रचने वाला।
परशुराम का फरसा चमका, बुद्धि बदलने वाला॥

*—विष्णु कुमार शर्मा 'कुमार'*

# गायत्री तपोभूमि, मथुरा



महाशिवरात्रि पर्व पूजन,



फाल्गुन पूर्णिमा दीपयज्ञ



होलिका दहन

# युग निर्माण योजना

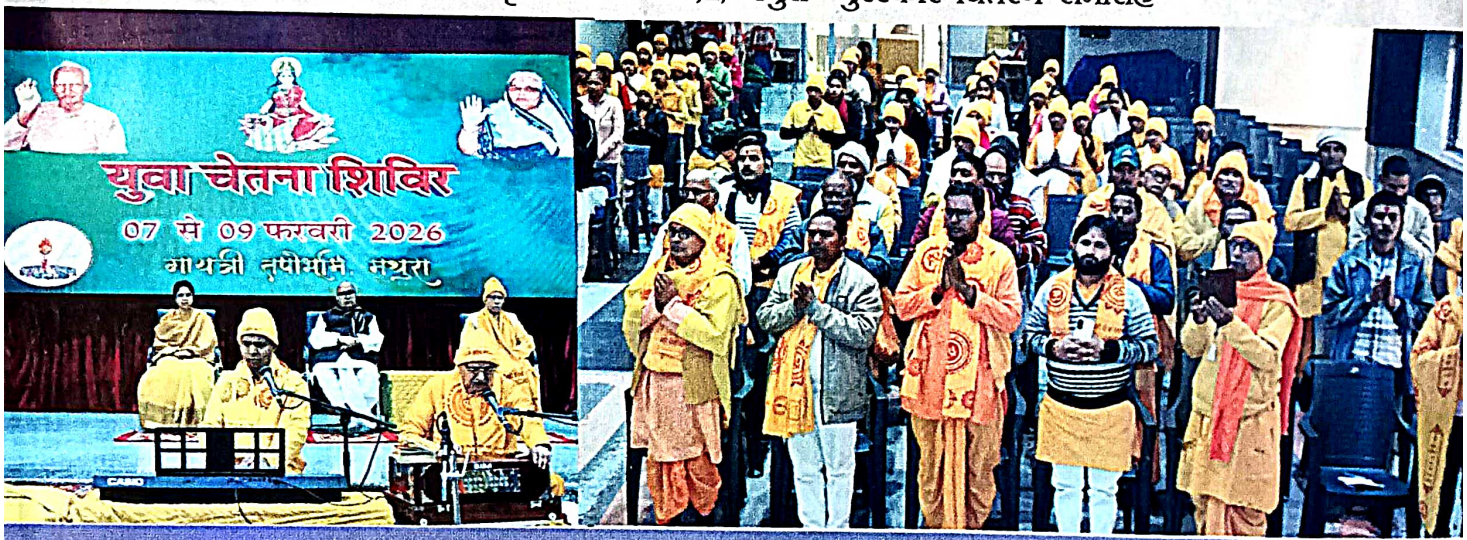
(मासिक) R.N.I No. 13636/64

प्र. ति. 17-3-2026
Regd No. Mathura-024/2024-2026
Licensed to Post Without Prepayment
No. Agra/WPP-10/2024-2026





भारतीय संस्कृति ज्ञान परीक्षा, मथुरा पुरस्कार वितरण समारोह




युवा चेतना शिविर

स्कैन करें

(वेबसाइट) (यूट्यूब) (फेसबुक) (इंस्टाग्राम) (व्हाट्सऐप) (एक्स)


स्वामी युग निर्माण योजना ट्रस्ट, मथुरा के लिए मृत्युंजय शर्मा द्वारा युग निर्माण योजना ट्रस्ट, मथुरा से प्रकाशित तथा युग निर्माण योजना प्रेस, मथुरा से मुद्रित। संपादक– ईश्वर शरण पाण्डेय, सह संपादक–सूर्यमणि तिवारी, दीनदया


दूरभाष नंबर–(0565) 2530115, 2530200, 2530399, 2530128, मो.– 09927086289, 09927086287
E-Mail: yugnirman@yugnirmanyojna.org Website: www.yugnirmanyojna.org